श्री कर्मग्रन्थ.

(हिन्दी सानुवाद)

शुद्धिपत्र.

पृष्ठ.	पंक्ती.	अशुद्ध.	शुद्ध.
१	१	विनाग	विवागं
१	२	जिएरो	जिएण
२	१६	मार्ते	मातो
३	८	नया	तय
४	२०	उसी	इसी
६	१	मामा	समा
८	५	जुवा	जुश्रा
९	२०	वधन	नट वधन
१०	७	निग्गेट	निग्गोह
१०	१२	वह	वे
१४	१०	—	दर्शनावर्गीय
१४	११	मक्ति	भक्ति
२२	५	मुहग	मुहन
२२	५	तिगायन	तिगाचन
२३	७	निगसपयण	तिमनंघयग
२३	७	विमेत्तरि	निग्गत्तरि
२३	२२	अपूर्वदा	अपूर्व
२४	१	सजले	सजलण
२४	१	महुमि	महुमभि
२४	७	रेव	रव
२४	११	पचवन	पचादन
२५	११	उके	चिकके
२५	१२	को	के
२६	५	गयगंन	सयगनु
२६	७	पना	पने
२६	१४	कासत्ता	कीसत्ता
३१	१२	अगे	आगे
३१	१२	कम्म	काम
३२	८	जाड	जोड
३२	९	मनुज्या	मनुष्य
३३	१	चउराहेआ	चउरहिआ
३३	२	मिरिभव्व	तिरिभव्व
३३	१३	विलले	विकले
३४	१६	यथाल्यान	यथाख्यान
४०	१३	गल्याता दिके	मत्यातादिको
४१	३	नभागं	सभागु
४१	३	चउत्त	नउनु
४२	१५	७-८-६-७	७-८-६-५-२
४२	१६	६	५
४२	१७	७	८
४५	१	ममऽमनि	तनऽमनि
४६	१८	है	है।
४६	१	मव	सव्वे
४९	४	तिम्रानान	निम्ननाए
४९	८	नयकाच	क्रमशाच
५१	७	मत	स्त्रा
५६	१६	तोदोना	दोना
५६	१४	संतिमोह	उपशान्तमोह
६०	२	भरगगाड	अनन्तर
६६	५	किलानि	मनुाग

भूमिका.

श्रीमान् देवेन्द्रसूरीश्वरका बनाया हुवा यह कर्मग्रन्थ सारे संसारमे प्रख्यात है. स्व और परमतके सभी विद्वान अपने मुक्त कंठसे प्रशंसा करते है उक्त सूरीश्वरके बनाये हुवे अनेक ग्रन्थ इस समय विद्यमान है. जिसमे यह एक अमूल्य रत्न है. कर्म विषयिक दूसरे भी बड़े २ ग्रन्थ हैं. मगर जिस सरलताके साथ बालजीव इस ग्रन्थको पढ कर लाभ उठा सक्ते हैं. वेसा अन्य ग्रन्थोंसे नहीं. क्यों कि इस की पद्य रचना बहुत ही सरल और ऐसी पद्धतीसे की गई है कि जो अन्य ग्रन्थोंमे वह नहीं पाइ-जाती है।

कर्मग्रन्थ उपर टीका, बालावबोध, शब्दार्थ, गाथार्थ अनेक विद्वानोंके किये हुवे मौजुद है. जिसमें कितनेक छप भी गये हैं. और जो छपे है वे विवेचन (विस्तार) सहित छपे हैं. किन्तु स्वल्प बुद्धिवाले उन ग्रन्थोंसे चाहे उतना लाभ नहीं उठा सके ? वास्ते मैने उन्ही ग्रन्थो की सहायतासे यह शब्दार्थ किया है. नित्य पाठीयोंके लिये यह बहुत उपयोगी होगा. क्यों कि हंमेशां पाठ करते समय उसके भावार्थको देख सक्ते हैं. पदोका शब्दार्थ पूरा किया गया है.

जैनागमोमें प्रवेश करनेके लिये यह ग्रन्थ एक कूंची है. इसमें कर्म प्रकृतियोंका स्वरूप अनुक्रमसे बहुत अच्छि तरहसे

॥ ॐ ॥

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पुष्प न. ७८

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

श्रीमद् देवेन्द्रसूरीश्वर विरचित कर्मग्रन्थ.

हिन्दी अनुवाद सहित

कर्म विपाक नाम पहला कर्मग्रन्थ.

सिरिवीरजिणं वंदिय, कम्म विवाग समासओ वुच्छं ।
कीरइ जिएण हेउहिं, जेणंतो भण्णए कम्मं ॥ १ ॥

पयइ ठिइ रस पएसा, तं चउहा मोअगस्स दिट्ठंता ।
मूल पगइट्ठ उत्तर, पगई अडवन्नसय भेयं ॥ २ ॥

(मैं) श्री वीर जिनेश्वर को नमस्कार कर संक्षेपसे कर्मविपाक "नामा" ग्रन्थ को कहता हूं जिस कारण जीवने हेतुओं (मिथ्यात्व अव्रतयोग कषाय) से कीया है इस लिये "उसको" कर्म कहते हैं ॥ १ ॥ वे (कर्म) प्रकृति, स्थिति, रस, प्रदेश से मोदक के दृष्टान्त चार (प्रकार) हैं मूल प्रकृति आठ (और) उत्तर प्रकृति एकसो अठावन भेद हैं ॥ २ ॥

---

१ अर्थात् [illegible] पुद्गल द्रव्य दोनो के [illegible] ॥

पज्जय अक्खर पय संघाया पडिवत्ति तहय अणुओगो ।
पाहुड पाहुडपाहुड वत्थु पुव्वाय स समासा ॥ ७ ॥

अणुगामि वड्ढमाणय पडिवाइयरविहा छहा ओही ।
रिउमइ विउलमइ मणनाणं केवल मिगविहाणं ॥ ८ ॥

एसिं जं आवरणं पडुव्व चक्खुस्स तं तया वरणं ।
दंसण चउ पणनिद्दा वित्तिसम दंसणावरणं ॥ ९ ॥

चक्खू दिट्ठि अचक्खू सेसिंदिय ओहि केवलेहि च ।
दंसण मिह सामन्नं तस्सावरणं तया चउहा ॥ १० ॥

पर्यायश्रुत, अक्षरश्रुत, पदश्रुत, सघातश्रुत, प्रतिपत्तिश्रुत, उसी तरह अनुयोगश्रुत, प्राभृतश्रुत, प्राभृतप्राभृतश्रुत, वस्तुश्रुत, और पूर्वश्रुत (ये दश भेद) समास सहित (प्रत्येक शब्द के साथ समास शब्द जोडनेसे बीस भेद श्रुत के होते हैं) ॥ ७ ॥ अनुगामि, वर्धमान, प्रतिपाति. इतर भेद (अनानुगामि, वर्धमान, अप्रतिपाति गणनेसे) छे प्रकार अवधिज्ञान है । ऋजुमति. विपुलमति, (दो भेद मनःपर्यवज्ञान है. (और) केवलज्ञान एक प्रकार है. ॥ ८ ॥ इन (मति आदि पांच ज्ञानों) का जो आंखकी पट्टी समान आवरण है उस (आवरण) को ज्ञानावरणीय कहते हैं. दर्शनावरणीय चार, निद्रा पांच(यहनों) पहरेदारके समान दर्शनावरणीय कर्म है. ॥ ९ ॥ चक्षु दर्शन, शेष इन्द्रिय द्वारा अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन, यह सामान्य (उपयोग) है इसके आवरणको चार प्रकारका दर्शनावरणीय कहते है ॥ १० ॥

पज्जय अक्खर पय संघाया पडिवत्ति तहय अणुओगो ।
पाहुड पाहुडपाहुड वत्थु पुव्वाय स समासा ॥ ७ ॥

अणुगामि वड्ढमाणय पडिवाइयरविहा छहा ओही ।
रिउमइ विउलमइ मणनाणं केवल मिगविहाणं ॥ ८ ॥

एसि जं आवरणं पडुव्व चक्खुस्स तं तया वरणं ।
दंसण चउ पणनिद्दा वित्तिसम दंसणावरणं ॥ ९ ॥

चक्खू दिट्ठि अचक्खू सेसिंदिय ओहि केवलेहिं च ।
दंसण मिह सामन्नं तस्सावरणं तया चउहा ॥ १० ॥

पर्यायश्रुत, अक्षरश्रुत, पदश्रुत, संघातश्रुत, प्रतिपत्तिश्रुत, उसी तरह अनुयोगश्रुत, प्राभृतश्रुत, प्राभृतप्राभृतश्रुत, वस्तुश्रुत, और पूर्वश्रुत (ये दश भेद) समास सहित (प्रत्येक शब्द के साथ समास शब्द जोडनेसे बीस भेद श्रुत के होते हैं) ॥ ७ ॥ अनुगामि, वर्धमान, प्रतिपाति. इतर भेद (अनानुगामि. वर्धमान, अप्रतिपाति गणनेसे) छे प्रकार अवधिज्ञान है । ऋजुमति, विपुलमति, (दो भेद मनःपर्यवज्ञान हैं. (और) केवलज्ञान एक प्रकार है. ॥ ८ ॥ इन (मति आदि पांच ज्ञानों) का जो आंखकी पट्टी समान आवरण है उस (आवरण) को ज्ञानावरणीय कहते हैं. दर्शनावरणीय चार. निद्रा पांच (यहनौ) पहरेदारके समान दर्शनावरणीय कर्म है. ॥ ९ ॥ चक्षु दर्शन, शेष इन्द्रिय द्वारा अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन, यह सामान्य (उपयोग) है इसके आवरणको चार प्रकारका दर्शनावरणीय कहते हैं ॥ १० ॥

मीसा न राग दोसो जिणधम्मे अंतमुहु जहा अन्ने ।
नारियल दीव मणुणो मिच्छं जिण धम्म विवरीयं ॥ १६ ॥

सोलसकसाय नव नोकसाय दुविहं चरित मोहणियं ।
अण अप्पच्चक्खाणा पच्चक्खाणाय संजलना ॥ १७ ॥

जा जीव वरिस चउमास पक्खगा नरय तिरिय नर अमरा ।
सम्मा णु सव्वविरई अहखाय चरित्त घायकरा ॥ १८ ॥

जल रेणु पुढवि पव्वय राईसरिसो चउव्विहो कोहो ।
तिणि सलया कट्ठ ट्ठियं सेलत्थं भोयमो माणो ॥ १९ ॥

मिश्रमोहनीय "के उदयसे" जैन धर्मके विषय रागद्वेष नहीं जैसे नारियल द्वीपके मनुष्योंको अन्न के विषय "राग द्वेष नहीं होता" इसका उदय) अन्तर मुहूर्त है. (और) जिनधर्म से विपरीत को मिथ्यात्व मोहनीय कहते हैं ॥ १६ ॥ सोलह कषाय (और) नवनो कषाय. ऐसे दो प्रकारसे चारित्र मोहनीय है। सोलह कषाय बताते है अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी और संज्वल ॥ १७ ॥ (वे अनुक्रमसे) यावज्जीव, वर्ष, चतुर्मास और पक्ष (रहते हैं नारकी, तिर्यंच, मनुष्य "और" देवगती (के कारण हैं) और" सम्यक्त्व, देश विरती. सर्व विरती "और" यथाख्यात चारित्र व घात करनेवाले है ॥१८॥ जल, रेती, पृथ्वी और परवत की रेखा समान चार प्रकारका क्रोध है. तृणकीसीक काष्ट. अस्थि और पत्थर के स्तम्भ (सदृश) मान है. ॥१९॥

१ अनन्तानुबन्धी क्रोध, अन० मान अन० माया, अन० लोभ, एव अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी और संज्वल प्रत्येक के चार २ भेद गननेसे सोलह भेद.

२ अनन्ता० अप्रत्या० प्रत्या० संज्व०

गइ जाइ तणु उवंगा बंधण संघायणाणि संघयणा ।
संठाण वण्ण गंध रस फास अणुपुव्वि विहगगई ॥ २४ ॥

पिंडपयडित्ति चउदस परघा उसास आयवुज्जोयं ।
अगुरुलहु तित्थ निमिणो वघाय मियअट्ठ पत्तेया ॥ २५ ॥

तस बायर पज्जत्तं पत्तेयं थिरं सुभं च सुभगं च ।
सुसरा इज्ज जसं तस दसगं थावर दसं तु इमं ॥ २६ ॥

थावर सुहम अपज्जं साहारण अथिर असुभ दुभगाणि ।
दुस्सर णाइज्जा जस मियनामे सेयरा वीसं ॥ २७ ॥

तस चउ थिर छक्कं अथिर छक्क सुहमतिग थावर चउक्कं ।
सुभगति गाइ विभासा तयाइ संखाहिं पयडीहिं ॥ २८ ॥

गति, जाति, तनु, उपांग, बंधन, संघातन, संघयण, संस्थान, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, आनुपूर्वी (और) विहायोगति ॥ २४ ॥ (यह) चौदह पिंड प्रकृति है ॥ पराघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अगुरुलघु, तीर्थंकर निर्माण (और) उपघात यह आठ प्रत्येक प्रकृति है ॥ २५ ॥ त्रस, बादर पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सौभाग्य, सुस्वर, आदेय और यशः कीर्ति (यह) त्रस दशक (कहलाती है) " और " स्थावर दशक यह है ॥२६॥ स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर अशुभ, दौर्भाग्य, दुःस्वर, अनादेय (और) अयश. कीर्ति यह नाम कर्मकी इतर सहित बीस प्रकृति हुइ ॥ २७ ॥ (अब इन प्रकृतियोंका संक्षेपसे कथन करने के लिये सकेत संज्ञा बताते हैं) त्रसचतुष्क, स्थिरछक, अस्थिरछक, सूक्ष्मत्रिक, स्थावरचतुष्क और सौभाग्यत्रिक आदि संकेत हैं इसको आदीसे संख्याके अन्त तक की प्रकृतियां समझ लेनी ॥ २८ ॥

माया वलेहि गोमुत्ति मिढसिंग घणवंसि मूल समा।
लोहो हलिद खंजण कद्दम किमिराग सारिच्छो ॥ २०

जस्सुदया होइ जिए हास रई अरइ सोग भय कुच्छा।
सनिमित्त मन्नहा वा तं इह हासाइ मोहणियं ॥ २१ ॥

पुरिसित्थि तदुभयं पइ अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ।
थी नर नपु वेउदओ फुंफुम तण नगर दाहसमो ॥ २२।

सुर नर तिरि नरयाऊ हडिसरिसं नामकम्म चित्ति समं
बायाल तिनवइ विहं तिउत्तरसयंच सत्तट्ठी ॥ २३ ॥

बांसकी छाल, बैलकी मूत्रधारा मेंढेका सींग ॥ (और
कठिन बांसकी जड के समान माया है. (और) लोभ हरि
खञ्जन, कर्दम (और) किरमचीरंग के सरीखा है ॥ २० ॥ जिन
उदयसे जीवको हास्य, रति, अरति, शोक भय (और) जुगु
कारणवश अथवा अन्यथा बिना कारण होती है उसको यहां
स्यादि मोहनीय कर्म कहते है. ॥२१॥ जिसके प्रभावसे पुरुष, स्त्रि
(तथा पुरुष स्त्री दोनोंके प्रति अभिलाष याने मैथुन की अभिल
होती है वह स्त्री, पुरुष (और नपुंसक वेदका उदय है. (और क्रमः
[illegible] अग्नि तृणकी अग्नि और नगरदाहके समान है. ॥२
देवायुः, मनुष्यायुः, तिर्यंचायुः (और) नरकायुः बेडी
समान है. नाम कर्म चीतारे के समान है (वह) बयाली
[illegible] [illegible] [illegible] और सडसठ प्रकारका है ॥ २३

गइ जाइ तणु उवंगा बंधण संघायणाणि संघयणा ।
संठाण वन्न गंध रस फास अणुपुव्वि विहगगई ॥ २४ ॥

पिंडपयडित्ति चउदस परघा उसास आयवुज्जोयं ।
अगुरुलहु तित्थ निमिणो वघाय मियअट्ठ पत्तेया ॥ २५ ॥

तस बायर पज्जत्तं पत्तेयं थिरं सुभं च सुभगं च ।
सुसरा इज्ज जसं तस दसगं थावर दसं तु इमं ॥ २६ ॥

थावर सुहुम अपज्जं साहारण अथिर असुभ दुभगाणि ।
दुस्सर णाइज्जा जस मियनामे सेयरा वीसं ॥ २७ ॥

तस चउ थिर छक्कं अथिर छक्क सुहुमतिग थावर चउक्कं ।
सुभगति गाइ विभासा तयाइ संखाहिं पयडीहिं ॥ २८ ॥

गति, जाति, तनु, उपांग, बंधन, संघातन, संघयण, संस्थान, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, आनुपूर्वी (और) विहायोगति ॥ २४ ॥ यह चौदह पिंड प्रकृति है॥ पराघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अगुरुलघु, तीर्थंकर निमाण 'और' उपघात यह आठ प्रत्येक प्रकृति है । २५ ॥ त्रस, बादर पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सौभाग्य, सुस्वर, आदेय और यशः कीर्ति (यह) त्रस दशक कहलाती है "और" स्थावर दशक यह है ॥२६॥ स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर अशुभ, दौर्भाग्य, दुःस्वर, अनादेय (और अयशः कीर्ति यह नाम कर्मकी इतर सहित बीस प्रकृति हुई ॥ २७ ॥ (अब इन प्रकृतियोंका संक्षेपसे कथन करने के लिये संकेत संज्ञा बताते है। त्रसचतुष्क, स्थिरछक, अस्थिरछक, सूक्ष्मत्रिक, स्थावरचतुष्क और सौभाग्यत्रिक आदि संकेत है इनको आदीसे संख्याके अन्त तक की प्रकृतियां समझ लेनी ॥ २८ ॥

माया वलेहि गोमुत्ति मिढसिंग घणवंसि मूल समा।
लोहो हलिद्द खंजण कद्दम किमिराग सारिच्छो ॥ २०

जस्सुदया होइ जिए हास रई अरइ सोग भय कुच्छा।
सनिमित्त मन्नहा वा तं इह हासाइ मोहणियं ॥ २१ ॥

पुरिसित्थि तदुभयं पइ अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ।
थी नर नपु वेउदओ फुंफुम तण नगर दाहसमो ॥ २२ ॥

सुर नर तिरि नरयाऊ हडिसरिसं नामकम्म चित्ति समं
वायाल तिनवइ विहं तिउत्तरसयंच सत्तट्ठी ॥ २३ ॥

बांसकी छाल, बैलकी मूत्रधारा मेंढेका सींग ॥ [illegible]
कठिन बांसकी जड़ के समान माया है. (और) लोभ ह[illegible]
खंजन, कर्दम (और) किरमचीरंग के सरीखा है ॥ २० ॥ जि[illegible]
उदयसे जीवको हास्य, रति, अरति, शोक, भय (और) जुगु[illegible]
कारणवश अथवा अन्यथा बिना कारण होती है उसको यह[illegible]
स्यादि मोहनीय कर्म कहते है. ॥२१॥ जिसके प्रभावसे पुरुष,[illegible]
(तथा) पुरुष स्त्री दोनोंके प्रति अभिलाष याने मैथुन की अभि[illegible]
होती है वह स्त्री, पुरुष और नपुंसक वेदका उदय है. (और क्र[illegible]
कंडे की अग्नि, तृणकी अग्नि और नगरदाहके समान है.।
देवायुः, मनुष्यायुः, तिर्यंचायुः (और) नरकायुः बेडी
समान है. नाम कर्म चीतारे के समान है (यह) बयाल[illegible]
तिरानवे एकसौ तीन और सड़सठ प्रकारका है ॥ [illegible]

गइ जाइ तणु उवंगा बंधण संघायणाणि संघयणा ।
संठाण वण्ण गंध रस फास अणुपुव्वि विहगगई ॥ २४ ॥

पिंडपयडित्ति चउदस परघा उसास आयवुज्जोयं ।
अगुरुलहु तित्थ निमिणो वघाय मियअट्ठ पत्तेया ॥ २५ ॥

तस बायर पज्जत्तं पत्तेयं थिरं सुभं च सुभगं च ।
सुसरा इज्ज जसं तस दसगं थावर दसं तु इमं ॥ २६ ॥

थावर सुहम अपज्जं साहारण अथिर असुभ दुभगाणि ।
दुस्सर णाइज्जा जस मियनामे सेयरा वीसं ॥ २७ ॥

तस चउ थिर छक्कं अथिर छक्क सुहमतिग थावर चउक्कं ।
सुभगति गाइ विभासा तयाइ संखाहि पयडीहिं ॥ २८ ॥

गति, जाति, तनु, उपांग, बंधन, संघातन, संघयण, संस्थान, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, आनुपूर्वी (और) विहायोगति ॥ २४ ॥ (यह) चौदह पिंड प्रकृति हैं॥ पराघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अगुरुलघु, तीर्थङ्कर निर्माण (और) उपघात यह आठ प्रत्येक प्रकृति हैं ॥ २५ ॥ त्रस, बादर पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सौभाग्य, सुस्वर, आदेय और यश॰ कीर्ति (यह) त्रस दशक (कहलाती है) "और" स्थावर दशक यह है ॥२६॥ स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर अशुभ, दौर्भाग्य, दुःस्वर, अनादेय (और) अयशः कीर्ति यह नाम कर्मकी इतर सहित बीस प्रकृति हुई ॥ २७ ॥ (अब इन प्रकृतियोंका संक्षेपसे कथन करने के लिये संकेत संज्ञा बताते हैं) त्रसचतुष्क, स्थिरछक्क, अस्थिरछक्क, सूक्ष्मत्रिक, स्थावरचतुष्क और सौभाग्यत्रिक आदि संकेत हैं इसको आदीसे संख्याके अन्त तक की प्रकृतियां समझ लेनी ॥ २८ ॥

वण्णचउ अगरुलहु चउ तसाइदुतिचउरछक्कमिच्चाई ।
इय अन्नावि विभासा तयाइसंखाहिपयडीहिं ॥ २९ ॥

गइयाईण उ कमसो चउ पण पण ति पण पंच छ छक्कं ।
पण दुग पण ट्ठ चउ दुग इय उत्तरभेय पण सट्ठी ॥ ३० ।

अडवीस जुया तिनवइ संते वा पनरबंधणे तिसयं ।
बंधण संघाय गहो तणूसु सामन्नवण्णचउ ॥ ३१

इय सत्तट्ठी बंधोदए य न य सम्म मीसया बन्धे ।
बंधु दए सत्ताए वीस दुवीसट्ठ वन्नसयं ॥ ३२

वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क त्रसादि द्विक, त्रिक, चतु (और छक इत्यादि यह इसके सिवाय और भी विभाषा आ प्रकृति से संख्या के अन्त तक की प्रकृति समझ लेनी ॥ २९ गति आदि की अनुक्रमसे चार पांच, पांच, तीन, पांच, पा छे, छे, पांच, दो पांच, आठ, चार (और) दो इस तरह उ भेद पैंसठ हुवे ॥ ३० ॥ पूर्वोक्त अट्ठाईस (और पैंसठ प्रकृ को जोड देनेसे तेरानवे (प्रकृति) सत्तामें. अथवा तेरानवे पन्द्रह बंधन की याने पांच के बदले पन्द्रह मिलाने से एक तीन प्रकृति सत्ता में होती है. शरीर में अर्थात् शरीर के ग्रहण बंधन संघातन ग्रहण हो जाता है सामान्य से वर्ण चतुष्क का ग्रहण होता है ॥ ३१ । यह सड़सठ प्रकृति बंध, उदय, उदी की अपेक्षा समझनी, सम्यक्त्व मोहनी मिश्र मोहनी बंध नहीं होती (बन्ध उदय, सत्ता में 'अनुक्रम से, एक सो बी एक सौ बाईस, एक सौ अट्ठावन (प्रकृति होती है) ॥ ३२

निरयतिरिनरसुरगई इगवियतियचउपणिदिजाईओ ।
ओराल विउव्वा हारग तेय कम्मण पण सरीरा ॥ ३३ ॥

बाहु रु पिट्ठि सिर उर उय रंग उवंग अंगुली पमुहा ।
सेसा अंगो वंगा पढम तणु तिगस्सु वंगाणि ॥ ३४ ॥

उरलाइ पुग्गलाणं निवद्ध नज्भंतयाण संबंधं ।
जं कुणइ जउ समं तं बंधण मुरलाई तणुनामा ॥ ३५ ॥

जं संघाइ उरलाइ पुग्गले तणगणं व दंताली ।
तं संघायं बंधणमिव तणुनामेण पंचविहं ॥ ३६ ॥

नारकी, तिर्यंच' मनुष्य और देव (यह चार) गति एकेन्द्री, द्वि० त्री० चतु० और पंचेन्द्री (यह पांच) जाति (और) औदारिक वैक्रिय, आहारक, तैजस (और) कार्मण (यह) पांच शरीर कहलाते है ॥ ३३ ॥ भुजा, जघा, पीठ, शिर छाती (और) पेट (यह) अंग है (और) अंगुली प्रमुख उपांग कहलाती है. सेस अंगोपांग पहले के तीन शरीर में होते है ॥ ३४ ॥ जो (कर्म) लाख के समान पहिले नांधे हुवे वर्तमान में नांधते हुवे औदारिकादि पुद्गलों का (आपस में) संबंध करता है उस को औदारिकादि बंधन (पांच) शरीर के नाम से (पांच प्रकार है) ॥ ३५ ॥ दंताली से तृण समुह के (समान) जो औदारिकादि (शरीर के) पुद्गलों को इकट्ठा करता है यह संघातन (नाम कर्म) है. बंधन (नाम कर्म) की तरह शरीर नाम की अपेक्षा पांच प्रकार है. ॥ ३६ ॥

वण्णचउ अगुरुलहु चउ तसाइदुतिचउरछक्कमिच्चाई ।
इय अन्नावि विभासा तयाइसंखाहिपयडीहिं ॥ २९ ॥

गइयाईण उ कमसो चउ पण पण ति पण पंच छ छक्कं ।
पण दुग पण ट्ठ चउ दुग इय उत्तरभेय पणसट्ठी ॥ ३० ॥

अडवीस जुया तिनवइ संते वा पनरबंधणे तिसयं ।
बंधणसंघायगहो तणूसु सामन्नवण्णचऊ ॥ ३१ ॥

इय सत्तट्ठी बंधोदए य न य सम्ममीसया बंधे ।
बंधुदए सत्ताए वीसदुवीसट्ठवन्नसयं ॥ ३२ ॥

वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसादि द्विक, त्रिक, चतुष्क और षट्क इत्यादि यह इसके सिवाय और भी विभाषा आदि प्रकृति से संख्या के अन्त तक की प्रकृति समझ लेनी ॥ २९ ॥ गति आदि की अनुक्रम से चार पांच पांच, तीन, पांच पांच, छे छे पांच दो पांच, आठ चार और दो इस तरह उत्तर भेद पैंसठ हुवे ॥ ३० ॥ पूर्वोक्त अट्ठाईस और पैंसठ प्रकृति, इनको जोड़ देनेसे तेरानवे प्रकृति सत्ता में, अथवा तेरानवे में पन्द्रह बन्धन की जगह पांच के बदले पन्द्रह मिलाने से एक सौ तीन प्रकृति सत्ता में होती है, शरीर में अर्थात् शरीर के ग्रहण से बन्धन संघातन ग्रहण हो जाता है सामान्य से वर्ण चतुष्क का ही ग्रहण होता है ॥ ३१ ॥ यह सड़सठ प्रकृति बंध, उदय, उदीरणा की अपेक्षा समझनी, सम्यक्त्व मोहनी मिश्र मोहनी बंध में नहीं गिननी इसलिए बंध, उदय, सत्ता में अनुक्रम से, एक सौ बीस, एक सौ बाईस एक सौ अट्ठावन प्रकृति होती है) ॥ ३२ ॥

निरयतिरिनरसुरगई इगवियतियचउपणिदिजाईश्रो ।
ओराल विउव्वा हारग तेय कम्मण पण सरीरा ॥ ३३ ॥

बाहु रु पिट्ठि सिर उर उय रंग उवंग अंगुली पमुहा ।
सेसा अंगो वंगा पढम तणु तिगस्सु वंगाणि ॥ ३४ ॥

उरलाइ पुग्गलाणं निवद्ध वज्झंतयाण संबंधं ।
जं कुणइ जउ समं तं बंधण मुरलाई तणुनामा ॥ ३५ ॥

जं संघाइ उरलाइ पुग्गले तणगणं व दंताली ।
तं संघायं बंधणमिव तणुनामेण पंचविहं ॥ ३६ ॥

नारकी, तिर्यंच' मनुष्य और देव (यह चार) गति एकेन्द्री, द्वि० त्री० चतु० और पंचेन्द्री (यह पांच) जाति (और) औदारिक वैक्रिय आहारक, तैजस, (और) कार्मण (यह) पांच शरीर कहलाते हैं ॥ ३३ ॥ भुजा, जंघा, पीठ, शिर छाती (और) पेट (यह) अंग हैं (और) अंगुली प्रमुख उपांग कहलाते हैं. सेस अंगोपांग पहले के तीन शरीर में होते हैं ॥ ३४ ॥ जो (कर्म) लाख के समान पहिले बांधे हुवे वर्तमान में बांधते हुवे औदारिकादि पुद्गलों का (आपस में) सबंध करता है उस को औदारिकादि बंधन (पांच) शरीर के नाम से (पांच प्रकार है) ॥ ३५ ॥ दंताली से घण समूह के (समान) जो औदारिकादि (शरीर के) पुद्गलों को इकट्टा करता है वह संघातन (नाम कर्म) है. बंधन (नाम कर्म) की तरह शरीर नाम की अपेक्षा पांच प्रकार है. ॥ ३६ ॥

ओराल विउव्वा हारयाणं सग तेअ कम्म जुत्ताणं ।
नवबंधणाणि इअर दु सहिआणि तिन्नि तेसिं च ॥ ३७ ॥

संघयणमट्ठिनिचओ तं छद्धा वज्जरिसहनारायं ।
तहय रिसहनारायं नारायं अद्धनारायं ॥ ३८ ॥

कीलिय छेवट्ठं इह रिसहो पट्टो कीलिआवज्जं ।
उभओमक्कडबंधो नारायं इममुरालंगे ॥ ३९ ॥

समचउरंसं निग्गोह साइ खुज्जाइ वामणं हुंडं ।
संठाणं वण्ण किण्ह नील लोहिय हलिद्द सिआ ॥ ४० ॥

अपने अपने तेजस कार्मण संयुक्त औदारिक, वैक्रिय, अहारक के नव बंधन[1] होते है. इतर तेजस कार्मण दोनों के संयोग से तीन[2] (बंधन) और तेजस कार्मण स्व की अपेक्षा तीन[3] बंधन ॥ ३७ ॥ हाडों की रचना को संहनन कहते है वह छे प्रकार के है. वज्रऋषभनाराच, उसी तरह ऋषभ नाराच, नाराच, अर्द्ध नाराच. कीलिका और छेवट्ठ. यहां ऋषभ का अर्थ पट्ट है और कीलिका अर्थ खीला है नाराच का अर्थ दोनों तर्फ मर्कट बंध है यह औदारिक में होता है ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ सम चतुरस्र, न्यग्रोध सादि कुब्ज, वामन, और हुंडक यह संस्थान है कृष्ण. नील, लाल, पीला और श्वेत यह वर्ण है ॥ ४० ॥

सुरही दुरही रस पण तित्त कडु कसाय अंबिला महुरा ।
फासा गुरु लहु मिउ खर सी उगह सिणिद्ध रुक्खट्ठा ॥४१॥
नील कसिणं दुगंधं तित्त कडुअं गुरु खरं रुक्खं ।
सीअं च असुहं नवगं इक्कार सगं सुभं सेसं ॥ ४२ ॥
चउगइ व्वणुपुव्वी गइपुव्वि दुगं तिगं निआउ जुअं ।
पुव्वीउदओ वक्के सुह असुह वसुट्ट विहगगइ ॥ ४३ ॥
परघा उदया पाणी परेसि बलिणंपि होइ दुद्धरिसो ।
ऊससिण लद्धिजुत्तो हवइ ऊसास नामवसा ॥ ४४ ॥
रविबिंबेउ जि अंगं तावजुअं आयनाउ नउजलणे ।
जमुसिण फासस्स तहि लोहिय वणस्स उदउति ॥ ४५ ॥

सुरभि, दुरभि (दोगंध) तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल और मधुर पांच रस हैं. (और) स्पर्श (आठ हैं) गुरु, लघु मृदु, खर, शीत, उष्ण, स्निग्ध (और) रूक्ष हैं ॥ ४१ ॥ नील, कृष्ण, दुरभिगंध, तिक्त, कटु, गुरु, खर, रुक्ष और शीत (यह) नौ अशुभ नवक हैं. शेष ग्यारह प्रकृति शुभ हैं ॥ ४२ ॥ चार गति के (समान) आनुपूर्वी भी चार हैं ; गति (और) आनुपूर्वी (गति) द्विक (कहलाती हैं) अपनी अपनी आयुष्य युक्त (होनेसे गति) त्रिक (कहलाती) है आनुपूर्वीका उदय वक्र गतिमें होता है शुभ (और अशुभ विहायोगति (दो प्रकार हैं.) बैल (और) ऊंट वत् ॥ ४३ ॥ पराघात के उदयसे प्राणी दूसरे बलवान् को भी अजय होता है उच्छ्वास नामकर्म के उदयमे उच्छ्वास लब्धि संयुक्त होता है. ॥४४॥ सूर्यमंडल के विषय (रत्नादि पृथ्वि-काय) जीवोका शरीर तापयुक्त होता है उसको) आतप नामका उदय है. तब अग्निकायमें उष्ण स्पर्श और रक्तवर्णका उदय है ४५

अणुसिण पयासरूवं जिअंगमुज्जो अए इहुज्जोआ ।
जइ देवुत्तर विक्किय जोइस खज्जोइ माइव्व ॥ ४६ ॥

अंगं नगुरु नलहुअं जायइ जीवस्स अगरुलहु उदया ।
तित्थेण तिहुअणस्सवि पुज्जो से उदओ केवलिणो ॥ ४७ ।

अंगो वंग निअमिणं निम्माणं कुणइ सुत्तहार समं ।
उवघाया उवहम्मइ सतणु अवयव लंबिगाईहिं ॥ ४८ ॥

बि ति चउ पणिंदि तस्सा बायराओ बायरा जिआ थूला ।
निअनिअ पज्जति जुआ पज्जता लद्धि करणेहिं ॥ ४९ ॥

यहां उद्योत (नाम कर्मके उदयसे) जीवोंका शरीर शीत प्रकाशरूप उद्योत करता है यथा) साधु, देवता के उत्तर वैक्रिय, ज्योतिषी और खद्योत-जुगनी कीडे की तरह ॥ ४६ ॥ अगुरु लघु (कर्म) के उदयसे जीवका शरीर न गरु, न लघु होता है तीर्थंकर त्रिभुवनको भी पूज्य होता है इसका उदय केवली को ही होता है ॥ ४७ ॥ सूत्रधार के समान निर्माण (नामकर्म) अंगोपांगों को नियमित याने योग्य स्थान व्यवस्थापन करता है. उपघात (नाम कर्म के उदयसे) अपने शरीर के अवयवपड जीभादिसे उपद्रव होता है । ४८ ॥ त्रस नाम कर्म के उदय) से द्वीन्द्रिय, त्रिन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय होता है. (बादर नाम कर्म के उदयसे अपनी अपनी पर्याप्तिया संयुक्त होते है. वे पर्याप्त जीव लब्धी और करण दो प्रकारसे है. ॥४९॥

[illegible]

पत्ते अतणुपत्ते उदएणं दंत अट्ठिमाइ थिरं ।
नाभुवरि सिराइ सुहं सुभगाओ सव्वजण इट्ठो ॥ ५० ॥

सुसरा महुर सुहझुणी आइज्जा सव्वलोअगिज्झवओ ।
जसओ जसकित्तीओ थावरदसगं विवज्जत्थं ॥ ५१ ॥

गोअं दुहुच्चनीअं कुलाल इव सुघड भुंभलाईअं ।
विग्घं दाणे लाभे भोगुवभोगेसु विरिए अ ॥ ५२ ॥

सिरि हरियसमं एयं जह पडिकुलेण तेण रायाई ।
न कुणइ दाणाईयं एवं विग्घेण जीवोवि ॥ ५३ ॥

प्रत्येक नामकर्म के उदयसे शरीर पृथक्-पृथक् होता है. दांत हड्डी आदि स्थिर होते है उसे स्थिर नाम कहते हैं नाभि उपर (अवयव) शुभ होते है (उसको) शुभ नाम कहते हैं. सौभाग्य नाम कर्मके उदयसे सब लोगों को ईष्ट लगता है ॥ ५० ॥ सुस्वर (नाम कर्मसे) मधुर ध्वनि होती है. आदेय (नाम कर्मसे) सब लोग वचनका आदर करते हैं. यशः कीर्ति (नाम कर्म के उदय) से यश कीर्ति होती है. स्थावर दशक इससे (त्रससे) विपरीत (अर्थ) वाला है ॥५१॥ गोत्र कर्म दो प्रकारका है उच्च और नीच जैसे कुंभार के बनाये अच्छे घट और मधु घट के समान अन्तराय(कर्म पांच प्रकार है) दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्यः ॥५२॥ यह (अन्तराय कर्म) भंडारी के समान है जैसे भंडारी प्रतिकूल होने से राजादि दान वगैरह नहीं कर सकते इसी प्रकार अन्तराय कर्म के कारण जीव भी दान नहीं कर सकता ॥ ५३ ॥

पडिणीयत्तण निन्हव उवघाय पओस अंतराएणं ।
अच्चासायणयाए आवरण दुग जिओ जयइ ॥ ५४ ॥

गुरुभत्ति खंति करुणा वय जोग कसाय विजय दाणजुओ
दढ धम्माइ अज्जइ सायम सायं विवज्जओ ॥ ५५ ॥

उम्मग्ग देसणा मग्ग नासणा देव दव्व हरणेहिं ।
दंसण मोहं जिण मुणि चेइय संघाइ पडिणीओ ॥ ५६ ॥

दुविहंपि चरण मोहं कसाय हासाय विसय विवसमणो ।
बंधइ नरयाउ महारंभ परिग्गहरओ रुद्दो ॥ ५७ ॥

प्रत्यनीकत्व—अनिष्टाचार, अपलाप, विनाश, प्रद्वेष, अन्तराय और अति आशातना से जीव आवरण दुग ज्ञानावरणीय कर्म उपार्जन करता है ॥ ५४ गुरु भक्ति, क्षमा, करुणा, व्रत, योग, कषाय का विजय, दान युक्त और दृढ धर्मादि से साता वेदनी को उपार्जन करता है और विपरीत पने से असाता वेदनी कर्म उपार्जन करता है ॥ ५५ ॥ उन्मार्ग का उपदेश, सत् मार्ग का विनाश और देव द्रव्य हरण से दर्शनमोहनीय कर्म बांधता है (तथा) जिन, मुनि, चैत्य और संघ के प्रत्यनीक पनेसे भी दर्शन मोहनीय कर्म बांधता है ॥ ५६ ॥ दोनों प्रकार के चारित्र मोहनीय कर्म कषाय हास्यादि विषय से विवश होने से बांधता है महारंभ परिग्रहमें रत और रौद्र परिणाम से नरकायु बांधता है ॥ ५७

तिरियाउ गूढहियओ सढो ससल्लो तहा मणुस्साउ ।
पयईइ तणु कसाओ दांणरुई मज्झिम गुणोअ ॥ ५८ ॥

अविरयमाइ सुराउ बालतओ काम निज्जरो जयइ ।
सरलो अगार विल्लो सुहनामं अन्नहा असुहं ॥ ५९ ॥

गुणपेही मयरहिओ अज्झयणज्झावणा रुइ निच्चं ।
पकुणइ जिणाइ भत्तो उच्चं नियं इयरहाउ ॥ ६० ॥

जिणपूयाविग्घकरो हिंसाइ परायणो जयइ विग्घं ।
इय कम्मविवागो यं लिहिओ देविन्द सूरिहि ॥ ६१ ॥

गुढ हृदय, शठ और सशल्य वाला तिर्यचायु बांधे. तथा प्रकृति से अल्प कषायी, दान रुचि और मध्यम गुण वाला मनुष्यायु बांधे ॥ ५८ ॥ बालतप अकाम निर्जरा अविरतादि से देवायु उपार्जन करता है. सरल गौरव रहित पनेसे शुभ नामकर्म बांधता है. अन्यथा इससे विपरीत अशुभ नाम कर्म बांधता है ॥ ५९ ॥ गुण देखने वाला, मद रहित, पढने पढाने में निरंतर रुचि वाला जिनेश्वरादि का भक्त उच्चगोत्र बांधे ॥ ६० ॥ जिनेन्द्र की पूजा में विघ्न करनेवाला हिंसादि में तत्पर अन्तराय कर्म उपार्जन करे. इस तरह यह कर्म विपाक नामा ग्रन्थ श्री देवेन्द्रसूरिजी ने लिखा है ॥ ६१ ॥ इति.
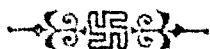
कर्मोंकी मूल प्रकृति ८ उत्तर १५८ के नाम.

मूल प्र० ८

१ ज्ञानवर्णीय कर्म
२ दर्शनावर्णीय कर्म
३ वेदनीय कर्म
४ मोहनीय कर्म
५ आयु कर्म
६ नाम कर्म
७ गोत्र कर्म
८ अन्तराय कर्म

ज्ञानावर्णीय ५

१ मति ज्ञानावर्णीय
२ श्रुत ज्ञाना०
३ अवधि ज्ञाना०
४ मन पर्यवज्ञा०
५ केवल ज्ञाना०

दर्शनावर्णीय ९.

१ चक्षु दर्शनाव०
२ अचक्षुदर्शना०
३ अवधि दर्शा०
४ केवल दर्शना०
५ निद्रा
६ निद्रानिद्रा
७ प्रचला
८ प्रचला प्रचला
[illegible]

वेदनीय २

१ सातावेदनीय
२ असातावे०

मोहनीय २८

दर्शन मोहनीय:
१ सम्यक्त्व
२ मिश्र
३ मिथ्यात्व

सोलह कषाय चारित्र मोहनीय:
४ अनन्तानुबंधी क्रोध
५ अनंतानुबंधी मान
६ " माया
७ " लोभ
८ अप्रत्याख्यानी क्रोध
९ " मान
१० " माया
११ लोभ
१२ प्रत्याख्यानी क्रोध
१३ " मान
१४ " माया
१५ " लोभ
१६ संज्वलन क्रोध
१७ " मान
१८ " माया
१९ " लोभ

२० हास्य
२१ रति
२२ अरति
२३ शोक
२४ भय
२५ जुगुप्सा
२६ पुरुषवेद
२७ स्त्रीवेद
२८ नपुंसकवेद

आयुष्य ४

१ देवायुः
२ मनुष्यायु
३ तिर्यंचायुः
४ नरकायुः

नामकर्म १०३

१ नरकगति
२ तिर्यंचगति
३ मनुष्यगति
४ देवगति
५ पंचेन्द्रियजाति
६ चौरिन्द्रियजाति

७ त्रीन्द्रियजाती
८ चतुरिन्द्रिय ,,
९ पंचेन्द्रिय ,,
१० औदारिक शरीर
११ वैक्रिय ,,
१२ आहारक ,,
१३ तेजस ,,
१४ कारमण ,,
१५ औदारिक अंगोपांग
१६ वैक्रिय ,,
१७ आहारक ,,
१८ औदारिक औदारिक बंधन
१९ ,,तेजस बंधन
२० ,,कार्मण बंधन
२१ औ० ते० का० ,,
२२ वै० वै० बंधन
२३ वै० ते० बंधन
२४ वै० का० बंधन
२५ वै० ते० का० बंधन
२६ आ० आ० बंधन
२७ आ० ते० बंधन
२८ आ० का० बंधन
२९ आ० ते० का० बंदन
३० ते ते० बंधन
३१ ते० का० बंधन

३२ का० का० बंधन
३३ औदारिक सघातन
३४ वैक्रिय
३५ आहारक ,,
३६ तेजस ,,
३७ कार्मण ,,
३८ वज्रऋषभनाराच संघयण
३९ ऋषभनाराच ,,
४० नाराच ,,
४१ अर्द्धनाराच ,,
४२ कीलिका ,,
४३ छेवठ ,,
४४ समचतुरस्र संस्थान
४५ न्यग्रोध ,,
४६ सादि ,,
४७ वामन ,,
४८ कुब्ज ,,
४९ हुंड ,,
५० कृष्ण वर्ण
५१ नील ,,
५२ लाल ,,
५३ पीला ,,
५४ सपेद ,,
५५ सुरभिगंध
५६ दुरभिगंध

५७ तिक्त रस
५८ कटु ,,
५९ कषाय ,,
६० आम्ल ,,
६१ मधुर ,,
६२ कर्कश स्पर्श
६३ मृदु ,,
६४ गुरु ,,
६५ लघु ,,
६६ शीत ,,
६७ उष्ण ,,
६८ स्निग्ध ,,
६९ रुक्ष ,,
७० नरकानुपूर्वी
७१ तिर्यंचा ,,
७२ मनुष्य ,,
७३ देव ,,
७४ शुभविहायोगति
७५ अशुभवि० गति
७६ पराघातनाम
७७ उच्छ्वासनाम
७८ आतपनाम
७९ उधोतनाम
८० अगुरुलघुनाम
८१ तीर्थंकरनाम
८२ निर्माणनाम
८३ उपघातनाम

त्रस दशक	स्थावर दशक	
८४ त्रसनाम	९४ स्थावरनाम	गोत्र २
८५ बादरनाम	९५ सूक्ष्मनाम	१ उच्च गोत्र
८६ पर्याप्तनाम	९६ अपर्याप्तनाम	२ नीच गोत्र
८७ प्रत्येकनाम	९७ साधारणनाम	
८८ स्थिरनाम	९८ अस्थिरनाम	अंतराय ५
८९ शुभनाम	९९ अशुभनाम	१ दानांतराय
९० सौभाग्यनाम	१०० दुर्भगनाम	२ लाभ०
९१ सुस्वरनाम	१०१ दुःस्वरनाम	३ भोग ”
९२ आदेयनाम	१०२ अनादेयनाम	४ उपभोग ”
९३ यशःकीर्तिनाम	१०३ अयशःकीर्ति	५ वीर्य ”

५-९-२-२८-४-१०३-२-५ कुल १५८ उत्तरप्रकृति;

इति श्री प्रथम कर्मग्रन्थ समाप्तम्.

अथ कर्मस्तवनामा द्वितिय कर्मग्रंथ.

तह थुणिमो वीरजिणं जह गुणठाणेसु सयल कम्माइ ॥
बंधुदओदीरणया सत्ता पत्ताणि खवि आणि ॥ १ ॥
मिच्छे सासण मीसे अविरय देसे पमत्त अपमत्ते ॥
निअट्टि अनिअट्टि सुहुमु वसमखीण सजोगि अजोगि गुणा ॥ २ ॥
अभिनव कम्मग्गहणं बंधो ओहेण तत्थ वीससयं ॥
तित्थयराहारगदुग वज्जं मिच्छंमि सत्तरसयं ॥ ३ ॥

जैसे गुणस्थानक विषय बंध, उदय, उदीरणा और सत्ताको प्राप्त हुवे सभी कर्मोंका क्षय किया है. वैसे वीर भगवान की (हम) स्तुति करते हैं. ॥ १ ॥ मिथ्यात्व, सास्वादन, मोश्र, अविरति, देशविरति, प्रमतसंयत्त, अप्रमतसंयत्त, निवृत्ति, अनिवृत्ति, (बादर संपराय,) सूक्ष्म संपराय, उपशान्तमोह, क्षीणमोह, सयोगी और अयोगी (यह चौदह) गुणस्थानक हैं ॥ २ ॥ नये कर्मोंके ग्रहणको बंध कहते हैं वह सामान्यसे एकसो वीस+(प्रकृति) हैं तिर्थंकर नाम. आहारक द्विक वर्जके एकसो सतरह (प्रकृतिका बंध) मिथ्यात्व गुणस्थान में होता है ॥ ३ ॥

+ १५ बन्धन ५ संघातन १६ वर्णादि १ सम्यक्त्व मोहनिय १ मिश्रमोहनिय एवं २८ प्रकृति अन्दर गीनेसे बाकी १२० प्र० का बन्ध है। शेष संज्ञा परिभाषासे जानना।

नरतिग जाइ थावरचउ हुंडा यव छिवठ नपु मिच्छं ॥
सोलंतो इगहिअसय सासणि तिरिथीण दुहगतिगं ॥ ४ ॥
अणमज्झागिइ संघयण चउ नि उज्जोअ कुखगइ त्थिति ।
पणवीसंतो मीसे चउसयरि दुयाउअ अबंधा ॥ ५ ॥
सम्मे सगसयरी जिणाउबंधि वइर नरतिअ विअ कसाया ॥
उरलदुगंतो देसे सत्तट्ठी तिअकसायंतो ॥ ६ ॥
तेवट्ठि पमत्ते सोग अरइ अथिरदुग अजस अस्सायं ॥
वुच्छिज्ज छच्च सत्तव नेइसुराउ जयानिट्ठं ॥ ७ ॥

नरकत्रिक, जाति चतुष्क, स्थावर चतुष्क, हुंड संस्थान, आतप नाम, छेवट संघयण, नपुंसक वेद और मिथ्यात्व मोहनीय (यह) सोलह प्रकृति वर्जके सास्वादन गु० में एकसो एक प्र० बांधे ॥ तीर्यंच त्रिक, थीणद्धित्रिक और दुर्भाग्यत्रिक ॥ ४ ॥ अनन्तानुबंधी चतुष्क, मध्य संस्थान चतुष्क, मध्य संघयण चतुष्क, नीचगोत्र, उद्योतनाम, अशुभ विहायो गति, स्त्रीवेद (यह) पचीस प्र० (कांपता है) और दो आयुः (मनुष्य, देव) का यहां अबंध है (इस लिये) चोहत्तर प्र० मिश्र गु० में (बांधे) ॥ ५ ॥ अविरति सम्यक्त्व दृष्टि गु० में जिन नाम, आयुष्य द्विक (मनुष्य, देव) का बंध होता है (इस लिये) सत्तत्तर प्र० बंध है ॥ वज्रऋषभनाराच संघयण, मनुष्यत्रिक, अप्रत्याख्यानी चोक, औदारिक द्विकका अन्त करके सडसठ प्र० देशविरति गु० में बांधे। [illegible] (प्रत्याख्यानी कषायका वर्जके ॥ ६ ॥ त्रेसठ प्र० प्रमत्त गु० में बांधे। शोक, अरति, अस्थिर द्विक, अयश, असाता (यह छ प्रकृति, विच्छेद हो (अथवा) देवायु. प्रारंभ करने पर [illegible] प्र० विच्छेद करे ॥ ७ ॥

गुणसट्ठि अप्पमत्ते सुराउबंधंतु जइ इहागच्छे ॥
अन्नह अट्ठावण्ण जं आहारगदुगंबंधे ॥ ८ ॥

अडवन्न अपुव्वाइमि निद्ददुगंतो छपन्न पणभागे ॥
सुरदुग पणिदि सुखगइ तसनव उरलविणुतणुवंगा ॥ ९ ॥

समचउर निमिण जिण वन्न अगुरुलहुचउ छलंसि तीसंतो ॥
चरमे छवीसबंधो हास रइ कुच्छ भय भेओ ॥ १० ॥

अनिअट्टिभागपणगे इगेगहीणो दुवीसविहबंधो ॥
पुम संजलचउगहं कमेण छेओ सत्तरसुहुमे ॥ ११ ॥

अगर सुरायु: बांधता हुवा अप्रमत्तगु० प्राप्त करे तो गुणसठ प्र० (कोबांधे) अन्यथा अठावन प्र० बांधे क्योंकि यहां आहारक द्विकका बंध होता है ॥ ८ ॥ अपूर्व करण गु० (के पहिले भाग) में अठ्ठावन प्र० (का बंध होता है) "और" निद्रा द्विक विच्छेद होनेसे पांच भागो में छप्पन प्र० (का बंध होता है) छठ्ठे भाग में तीस प्र० का अन्त करे (यथा) देवद्विक, पंचेन्द्रि जाति, शुभ विहायोगति त्रसनवक, औदारिक विना शरीर ४, उपांग २, समचतुस्त्र संस्थान, निरमाण नाम, जिन नाम, वर्ण चतुष्क, अगुरु लघु चतुष्क (के छेद होनेसे) चरम समय छाइस प्र० का बंध होता है ॥ हास्य, रति, दुगंच्छा और भयका नास होनेपर ॥ ९ ॥ १० ॥ अनिवृत्ति गु० के पांच भागों में (से पहिले भाग में) बाइस प्र० का बंध होता है ॥ पुरुषवेद, संज्वल चतुष्ककी अनुक्रमसे एकेक प्र० हीन करनेपर सतरह प्र० का बंध सूक्ष्म संपराय गु० में होता है ॥ ११ ॥

मीसे सयमणुपुव्वी णुदया मीसोदएण मीसंतो ॥
चउसयम जए सम्मा णुपुव्विखेवा विअकसाया ॥ १५ ॥

मणुतिरिणुपुव्वि विउवट्ठ दुहग अणाइज्जदुग सत्तर छेओ ॥
सगसी इदेसि तिरिगइआउ निउज्जोअं तिकसाया ॥ १६ ॥

अठच्छेओ इगसी पमत्ति आहारजुअल पक्खेवा ॥
थीणतिगाहारग दुग छेओ छस्सयरी अपमत्ते ॥ १७ ॥

सम्मतं तिगसंघयण तिअगच्छेओविसेत्तरि अपूव्वे ॥
हासाइछक अन्तो छसट्ठि अनिअट्टि वेअतिगं ॥ १८ ॥

आनुपूर्वीतीन (म० दे० ति०) का अनुदय होनेसे मीश्र गु० सौ प्र० का उदय होता है क्योंकि यहां मिश्र मो० उदय है इस लिये १०० और मिश्रमोहनीयका क्षय तथा सम्यक्त्व मोहनीयका और चार आनुपूर्वी के उदय होनेसे अविरती गु० में एकसो चार प्र० का उदय होता है ॥ अप्रत्याख्यानी चतुष्क ॥ १५ ॥ मनुष्य, तिर्यचानुपूर्वी, वैक्रियाष्टक दुर्भाग्य नाम अनादेयद्विक (यह) सतरह प्र० विच्छेद होनेसे देश विरती गु० में सतासी प्र० का उदय होता है ॥ तिर्यंच गति, तिर्यंचायु, नीच गोत्र उद्योत नाम और प्रत्याख्यानी कषाय ॥१६॥ यह आठ प्र० के विच्छेद और आहारक द्विक के उदय होनेसे इक्यासी प्र० का उदय प्रमत्त गु० मे होता है ॥ थीणद्धी त्रिक आहारकद्विक के अनुदय होनेसे छेहत्तर प्र० का उदय अप्रमत्त गु० मे होता है ॥ १७ ॥ सम्यक्त्व मोहनीय और अतिमके तीन संघयण के उदयविच्छेद होनेसे बाहुत्तर प्र० का उदय अपूर्वका करण गु० मे होता है ॥ हास्यादि छे प्र० का उदय विच्छेद होनेसे छासठ प्र० का उदय अनिवृत्ति गु० में होता है ॥ वेदत्रिक ॥ १८ ॥

संजले तिग छच्छेओ सट्ठि सुहुमि तुरिअलोभंतो ॥
उवसंत गुणे गुणसट्ठि रिसह नाराय दुग अन्तो ॥ १९ ॥

सगवन्न खीणदुचरिमि निद्द दुगंतो अचरिमि पणवन्ना ॥
नाणंतराय दंसण चउ छेओ सजोगि बायाला ॥ २० ॥

तित्थुदया उरलाथिर खगइदुग परितत्तिग छ संठाणा ॥
अगुरुलहु वन्नचउ निमिण तेअकम्माइ संघयणं ॥ २१ ॥

दूसर सूसर साया साए ग य रेच तीस वुच्छेओ ॥
बारस अजोगि सुभगा इज्जसन्न यरवेअणिअं ॥ २२ ॥

संज्वल त्रिक (यह) छे प्र० को वर्जके साठ प्र० का उदय सूक्ष्म संपराय गु० में होता है ॥ चौथे लोभके अनुदय होने[से] उनसठ प्र० का उदय उपशान्त मोह गु० में होता है ॥ ऋषभ नाराचद्विकका अन्त होनेसे ॥ १९ ॥ सत्तावन प्र० का उदय क्षीणमोह गु० के अन्तिम समय के पूर्व समय तक होता है और निद्रा द्विकके क्षय होनेसे क्षीण मोह गु० के अंत समय पचपन प्र० का उदय होता है। ज्ञानावरणीय पांच अन्तराय पांच दर्शनावरणीय चार के क्षय होनेसे ४२ बयालीस प्र० का उदय सयोगी गु० में होता है ॥ २० ॥ क्योंकि यहां तीर्थंकर नामका उदय होता है इसलिये ४२ कही ॥ औदारिक द्विक, अस्थिर द्विक, खगति द्विक, प्रत्येक त्रिक, संस्थान छे अगुरुलघु चतुष्क वर्णचतुष्क निर्माण नाम तैजस शरीर कार्मण शरीर प्रथम संहनन ॥ २१ ॥ सुस्वर, दुस्वर और साता असाता में से एक यह तीस प्र० के क्षय होनेसे बारह प्र० का उदय अयोगि गु० में होता है। सौभाग्य नाम, आदेय नाम यश नाम साता असाता में से एक। २२ ॥

तसतिगे पणिंदि मणुआउगइ जिणुच्चति चरिम समयंतो ॥
(उदओसमत्तो) उदउव्वुदीरणा परम पमत्ताइ सगगुणेसु ॥२३॥

एसा पयडितिगुणा वेयणि याहार जुअल थीण तिगं ॥
मणु आउ पमत्तंता अजोगि अणुदीरगो भयवं ॥ २४ ॥

उदीरणा सम्मता (सत्तामहा)

त्रसत्रिक, पंचेन्द्रिय जाति, मनुष्यायुः, मनुष्यगति, जिन
नाम उच्चगोत्र यह १२ प्र० का उदय विच्छेद अयोगी गु० के
चरम समय करे. उदयाधिकार समाप्त उदयकी माफक उदीरणा
भी समजना परन्तु इतना विशेष है कि अप्रमत्तादि सात गु० में
॥ २३ ॥ उदीरणा योग्य तीन प्र० कम होती है (जैसे आहारा-
द्विक, थीणाद्धि उके उदय विच्छेद होनेसे ७६ प्र० का अप्रमत
गु० में था) याने ५ प्र० का उदयविच्छेद हुवा था और उदीरणा
में ५ की जगह ८ प्र० को विच्छेद होनेसे ७३ प्र० की उदीरणा
अप्रमत गु० में होती है याने वेदनी द्विक और मनुष्यायुः इन तीन
प्र० की उदीरणा आगे के गु० में नहीं होती तथा अजोगी गु० में
उदीरणा नहीं होती ॥ २४ ॥ उदीरणा समाप्त.

गुणस्थान	उदय	उदीरणा
ओघे	१२२	१२२
मिथ्या०	११७	११७
सास्वा०	१११	१११
मिश्र	१००	१००
अविर०	१०४	१०४
देशवि०	८७	८७
प्रमतसं०	८१	८१
अप्रमत०	७६	७३
निवृत्ति	७२	६९
अनिवृ०	६६	६३
सूक्ष्म०	६०	५७
उपशां०	५९	५६
क्षीणमो०	[illegible]	[illegible]
सयोगी	४२	३९
अयोगी	१२	०

सत्ता कम्माणठिइ बंधाइ लद्ध अत्तलाभाणं ॥
संते अडयाल सयं जा उवसमु वि जिणु विअतइए ॥ २५

अपुव्वाइ चउक्के अण तिरिनिरयाउ विणु वयाल सयं ॥
सम्माइ चउसु सत्तग खयंमि इगचत्त सयमहवा ॥ २६ ॥

खवगंत पप्प चउसुवि पणयालं निरयतिरि सुराउ विणा ॥
सत्तग विणु अडतीसं जा अनिअट्टी पढम भागे ॥ २७ ॥

बंधादिसे आत्मस्वरूप पना प्राप्त किया है (ऐसे) कर्मों कि
स्थिति को सत्ता (कहते है) ॥ सत्ता में एकसो अडतालीस प्र
यावत् उपशान्त मोह गु० तक होती है. जिन नाम विना दूसरे
और तीसरे गु० में १४७ प्र० की सत्ता होती है ॥ २५ ॥ अपू
र्वकरणादि चार गु० में अनन्तानुबन्धी चतुष्क मनुष्य और तिर्
चायु विना एक सो बयालीस प्र० (की सत्ता देवायु बांधे हुए
उपशम श्रेणी मान की होती है) अथवा सम्यक्त्वादि चार गु
में दर्शन सप्तक क्षय होनेसे एकसो इगतालीस प्र० (की सत्ता क्षे
रहित क्षायक सम्यग् दृष्टि को होती है ॥ २६ ॥ जो जीव अना
भविक तद्भव मोक्ष जानेवाला है वह नारकी तिर्यंच और
देवायु बर्जके एक सो पैंतालीस प्र० की सत्ता चौथेसे सातवें गु
तक होती है और दर्शन सप्तक विना एकसो अडतीस प्र०
की सत्ता यावत् अनिवृत्ति गु० के पहिले भाग तक होती
है ॥ २७ ॥

थावर तिरि निरयायव दुग थिण तिगेग विगल साहारं ॥
सोलखओ दुवीस सयं विअंसि विअ तिअ कसायंतो ॥२८॥

तइ आईसु चउदस तेर वार छपण चउतिहियसय कमसो ॥
नपुइत्थि हास छग पुंस तुरिअ कोह मयमायखओ ॥ २९ ॥

सुहुमि दुसय लोहंतो खीण दुचरि मेगसय दुनिद्दखओ ॥
नवनवइ चरिम समए चउदंसण नाण विग्घंतो ॥ ३० ॥

पणसी सजोगि अजोगि दुचरि मे देव खगइ गंध दुगं ॥
फासट्ठवन्न रस तणु बंधण संघाय पण निमिणं ॥ ३१ ॥

स्थावर द्विक. तिर्यंच द्विक नरक द्विक, आतप द्विक, थी
ाद्धि त्रिक, एकेन्द्रियजाति, विगलेन्द्रिय (और) साधारण (इन)
ोलह प्र० के क्षय होनेसे एक सौ बाइस प्र० की सत्ता दूजे भाग में
ाती है ॥ दूसरे और तीसरे कषाय के क्षय होनेपर ११४-११३
१२-१०६-१०५-१०४-१०३ की सत्ता तीजे आदि भाग में होती
क्योंकि अनुक्रमसे नपुंसक वेद, स्त्री वेद. हास्यषट्क, पुरुष वेद
ज्वल क्रोध, मान, मायाका क्षय होता है ॥ २९ ॥ सूक्ष्मसंपराय
० में एकसो दो० प्र० (कीसत्ता) ॥ संज्वल लोभ के० क्षय होनेसे
क सो एक प्र० की सत्ता (क्षीण मोह गु० के) द्विचरम समय
तकरहती है ॥ (और) निद्राद्विक के क्षय होनेसे (क्षीण
ोह गु० के) अन्त समय निनानवे प्र० की सत्ता होती है ॥
र्शनावरणीय चार, ज्ञानावरणीय पांच (और) अन्तरायपांच
के क्षय होनेसे) पचासी प्र० (की सत्ता) सयोगी गु० में होती
॥ ३१ ॥

संघयण अथिर संठाण छक्क अगरुलहु चउ अपज्जत्तं ॥
सायंव असायंवा परित्तुवंग तिग सुसर निअं ॥ ३२ ॥

बिसयरी खओअ चरिमे तेरस मणुअ तस तिग जसाइज्जं ॥
सुभग जिणुच्च पणिंदिअ साया साए गयर छेओ ॥ ३३ ॥

नर अणुपुव्वि विणावा बारस चरिम समयंमि जो खविउं ॥
पत्तो सिद्धिं देविंद वंदिअं नमह तं वीरं ॥ ३४ ॥

अयोगी गु० के द्वि चरम समय तक पचासी प्र० की रहती है तत् समय देवद्विक, खगतिद्विक, गन्धद्विक, वर्णपांच, रस पांच, शरीर पांच, संघयण छे, अस्थिर छे, छे, अगुरु लघु चतुष्क, पर्याप्तानाम, शाता अशाता में की प्रत्येकत्रिक, उपांगत्रिक, सुस्वर नाम और नीच गोत्र ॥ ३२ ॥ (यह) बहोत्तर प्र० के क्षय होनेसे (अयोगी गु० के) समय तेरह प्र० की सत्ता रहती है ॥ मनुष्य त्रिक, त्रस। यशः नाम, आदेय नाम, शुभ नाम, जिन नाम, उच्च गोत्र, पं च जाति, शाता अशाता में की एवं एक १३ प्र० क्षय करे (मतान्तरे) मनुष्यानुपूर्वि विना बारह प्र० का चरम जिन्होंने क्षय करके सिद्धपद को प्राप्त किया है वह देवेन्द्रों वंदनीय वीर भगवानको नमस्कार हो ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

इति सत्ता अधिकार.

—※—

॥ वंदे वीरम् ॥

श्री बंधस्वामित्वनामा तृतीय कर्मग्रन्थ.

बंधविहाण विमुक्कं वंदिय सिरि वद्धमाण जिण चंदं ॥
गइ आईसु वुच्छं समासओ बंध सामित्तं ॥ १ ॥

गइ इंदिए य काए जोए वेए कसाय नाणेय ॥
संयम दंसण लेसा भव सम्मे सन्नि आहारे ॥ २ ॥

जिण सुरवेउव्वाहारदु देवाउय निरय सुहुम विगल तिगं।
एगिंदि थावरा यव नपु मिच्छ हुंड छेवट्ठं ॥ ३ ॥

कर्मबन्ध के विधानसे रहित चन्द्रमाके समान सौम्य श्री वर्द्धमानजिनेश्वरको नमस्कार करके गति आदि (मार्गणा) के विषे संक्षेपसे बन्ध स्वामीत्वका कहूंगा ॥ १ ॥ गति ४ ५ काय ६ योग ३ वेद ३ कषाय ४ ज्ञान ८ संयम ७ दर्शन ४ ६ भव्य २ सम्यक्त्व ६ संज्ञी २ आहारी २ यह ६२ मार्गणा ॥ २ जिन नाम, सुरद्विक, वैक्रियद्विक, आहारकद्विक, देवायु, नरकत्रिक, सूक्ष्मत्रिक, विकलेन्द्रियत्रिक, एकेन्द्रिय जाति, स्थावर, आतप नाम, नपुंसक वेद, मिथ्यात्व मोहनीय, छेवट्ठ संघयण ॥ ३ ॥

अण मज्झा गिइ संघयण कुखगइ निय इत्थि दुहग थीण तिगं ॥
उज्जोअ तिरिदुगं तिरि नराउ नर उरलदुग रिसहं ॥ ४ ॥
सुरइ गुण वीस वज्जं इग सउ ओहेण बंधहिं निरया ॥
तित्थ विणा मिच्छि सयं सासणि नपु चउ विणा छनुइ ॥५॥
विणु अण छवीस मीसे बिसयरि सम्मंमि जिण नराउ जुआ ॥
इअ रयणाइसु भंगो पकाइसु तित्थयर हीणो ॥ ६ ॥
अजिण मणु आउ ओहे सत्तमिए नरदुगुच्च विणु मिच्छे ॥
इग नवइ सासणे तिरि आउ नपुंस चउ वज्जं ॥ ७ ॥

अनन्तानु बंधि चतुष्क, मध्य संस्थान चार, मध्य संघयण चार, अशुभ विहायो गति, नीच गोत्र, स्त्री वेद दुर्भाग्यत्रिक, थीणद्धित्रिक, उद्योत नाम, तिर्यंचद्विक, तिर्यंचायु मनुष्यायु, मनुष्यद्विक औदारिकद्विक, और वज्रऋषभ नाराच संघयण (यह ५५ प्र० परिभाषा में अगे कम्म आवेगी जैसे अगली गाथामें सुरादि १९ प्र० कही है यह सुरद्विकसे आतपनाम, तक १९ समजना इस तरह अन्य जगह भी ॥ ३ ॥ ४ ॥ सुरादि १९ प्र० वर्जके एकसोएक प्र० ओघे नारकी बांधते हैं ॥ तिर्थकर नाम विना मिथ्यात्व गु० एकसो प्र० बांधे ॥ नपुंसक चतुष्क विना छयानवे प्र० सास्वादन गु० में बांधे ॥ अनन्तानुबंधी २६ विना मिश्र गु० सत्तर प्र० बांधे ॥ जिन नाम और मनुष्यायुः सहित बाहत्तर प्र० अविरति सम्य० गु० में बांधे ॥ इसप्रकार (कर्मबंध स्वामित्व) रत्न प्रभादि तीन नारकी में और पंकप्रभादि (तीन नारकी में उक्त प्रकृतियों में से) तीर्थंकर नाम, हीन करके कहना ॥ ६ ॥ जिननाम और मनुष्यायुः विना ९९ प्र० ओघे सातमी नारकी में बांधे ॥ मनुष्य द्विक और उच गोत्र विना ९६ प्र० मिथ्यात्व गु० में बांधे तीर्यचायु और नपुंसकचतुष्क विना ९७ प्र० सास्वादन गु० में बांधे ॥ ७ ॥

अण चउवीस विरहिआ सनर दुगुच्चाय सयरि मीस दुगे ॥
सत्तर सओ ओहि मिच्छे पज्ज तिरिआ विणु जिणाहारं
विणु निरय सोल सासणि सुराउ अण एगतीस विणु मीसे
ससुराउ सयरी सम्मे बीअ कसाए विणा देसे ॥ ९ ॥
इय चउगुणे सुवि नरा परमजया सजिण ओहु देसाइ ॥
जिण इक्कारस हीणं नवसय अपज्जत्त तिरिअनरा ॥ १० ॥
निरयव्व सुरा नवरं ओहे मिच्छे इगिंदि तिग सहिआ ॥
कप्प दुगे विअ एवं जिण हीणो जाइ भवण वणे ॥ ११ ॥

अनन्तानुबंधी २४ प्र० बिना और मनुष्यत्रिक तथा गोत्र सहित ७० प्र० मिश्र और अविरति गु० में सातमी वाले बांधे ॥ जिन नाम और आहारकद्विक बिना ११७ पर्याप्ता तिर्यंच ओघे तथा मिथ्यात्व गु० में बांधे ॥ ८ ॥ १६ प्र० बिना १०१ प्र० सास्वादन गु० में बांधे ॥ देवायुः अनन्तानुबंधी ३१ बिना ६९ प्र० मिश्र गु० में बांधे ॥ सहित ७० प्र० अविरती सम्य० गु० में बांधे ॥ दूजी कषाय ६६ प्र० देशविरति गु० तिर्यंच पर्याप्ता बांधे ॥ ९ ॥ इस तिर्यंचकी माफिक चार गुणस्थानमें मनुष्य भी समझना परन्तु अविरति सम्य० गु० में जिन नाम सहित ७१ प्र० का बंध करना ॥ (शेष) देश विरतादि १० गु० में ओघे कर्मस्तव की ॥ करना ॥ जिनादि ११ प्र० हीन करनेसे १०९ प्र० का बंध अपर्याप्त तिर्यंच और मनुष्योंको होता है ॥ १० ॥ नारकी कि तरह देवता ओं का बंध स्वामित्व कहना; परन्तु इतना विशेष है कि ओघे मिथ्यात्व गु० में देवता एकेंद्रियत्रिक सहित बांधे. पहिले दूसरे देवलोकमें भी इसी तरह. ज्योतिषी और भुवनपतिमें जिन नाद बिना शेष देवाओं की तरह समझना ॥ ११ ॥

यगुव्वसणं कुमाराइ आणयाइ उज्जोय चउराहेआ ॥
पज्ज सिरिअव्व नवसयमिगिंदि पुढविजलतरु विगले ॥ १२ ॥

छन्नवइ सासणि विणु सुहम तेर केइ पुण विंति चउनवइ ॥
तेरिअ नरा उहिं विणा तणु पज्जंति न जंति जओ ॥ १३ ॥

ओहुं पणिंदि तसे गइ तसे जिणिकार नरति गुच्च विणा ॥
ण वय जोगे ओहो उरले नरभंगु तंम्मिस्से ॥ १४ ॥

आहार छग विणाहे चउदससउ मिच्छि जिण पणग हीणं ॥
ासणि चउनवइ विणा तिरिअ नराउ सुहुमतेर ॥ १५ ॥

सनत्कुमार देवलोकसे यावत् आठवें सहस्रार देवलोक तक
त्नप्रभा नारकी कि परे बंध स्वामीत्व समझना ॥ आनत वगै-
ह शेष देवोंमें उद्योत चतुष्क विना बंध स्वामीत्व कहना ॥
पर्याप्ता तिर्यंचकी तरह १०६ प्र० का बंध एकेन्द्रिय जाति,
ृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय और विकलेन्द्रियमें मिथ्यात्व
० में कहना ॥ १२ ॥ सास्वादन गु० में सुक्ष्मादि तेरह प्र०
बेना ९६ प्र० का बंध एकेन्द्रियादिको होता है. कोइ आचार्य
तेर्यंच और मनुष्य आयुः विना ९४ प्र० का बंध कहते है. क्यों
के वे इस गु० में शरीर पर्याप्ति पूर्ण नही करते ॥ १३ ॥ पंचेन्द्रिय
ाति और त्रस कायमें कर्मस्तव ओघ बंधकी तरह कहना।
ति त्रसमें जिन एकादश, मनुष्यत्रिक और ऊंच गोत्र विना
०५ प्र० का बंध कहना ॥ मनयोग, वचनयोग और औदारिक
ाय योगमें कर्मस्तवकी तरह तेरह गु० का बंध कहना ॥ औदा
रेक मिश्र काय योगमें ॥१४॥ आहारकादि छे प्र० वर्जके ११४ प्र०
ा ओघे बंध होता है ॥ मिथ्यात्व गु० में जिन पचक हीन होनेसे
०९ प्र० का बंध होता है ॥ सास्वादन गु० में तिर्यंचायुः, मनुष्यायुः
ौर सुक्ष्मादि तेरह प्र० विना ९४ प्र० का बंध होता है ॥ १५ ॥

अण चउवीस विरहिआ सनर दुगुच्चाय सयरि मीस दुगे ॥
सत्तर सओ ओहि मिच्छे पज्ज तिरिआ विणु जिणाहारं ॥८॥
विणु निरय सोल सासणि सुराउ अण एगतीस विणु मीसे ॥
ससुराउ सयरी सम्मे बीअ कसाए विणा देसे ॥ ९ ॥
इय चउगुणे सुवि नरा परमजया सजिण ओहु देसाइ ॥
जिण इक्कारस हीणं नवसय अपज्जत्त तिरिअनरा ॥ १० ॥
निरयव्व सुरा नवरं ओहे मिच्छे इगिंदि तिग सहिआ ॥
कप्प दुगे विअ एवं जिण हीणो जाइ भवण वणे ॥ ११ ॥

अनन्तानुबंधी २४ प्र० विना और मनुष्यात्रिक तथा ऊंच- गोत्र सहित ७० प्र० मिश्र और अविरति गु० में सातमी नारकी- वाले बांधे ॥ जिन नाम और आहारकद्विक विना ११७ प्र० पर्याप्ता तिर्यंच बांधे तथा मिथ्यात्व गु० में बांधे ॥ ८ ॥ नरकादि १६ प्र० विना १०१ प्र० सास्वादन गु० में बांधे ॥ देवायुः और अनन्तानुबंधी ३१ विना ६९ प्र० मिश्र गु० में बांधे ॥ देवायुः सहित ७० प्र० अविरती सम्य० गु० में बांधे ॥ दूजी कषाय वर्जके ६६ प्र० देशविरति गु० तिर्यंच पर्याप्ता बांधे ॥ ९ ॥ इस पर्याप्ता तिर्यंचकी माफिक चार गुणस्थानमें मनुष्य भी समझना परन्तु अविरति सम्य० गु० में जिन नाम सहित ७१ प्र० का बंध करना ॥ शेष देशविरतादि १० गु० में आगे कर्मस्तव की माफिक करना ॥ जिनादि ११ प्र० हीन करनेसे १०९ प्र० का बंध अपर्याप्त तिर्यंच और मनुष्योंको होता है ॥ १० ॥ नारकी कि तरह देवताओंको भी बंध स्वामित्व करना- परन्तु इतना विशेष है कि ओघे और मिथ्यात्व गु० में देवता एकेंद्रियत्रिक सहित बांधे. पहिले और दूसरे देवलोकके भी इसी तरह. ज्योतिषी और भुवनपतिमें जिन नाम विना शेष देवोंकी तरह समझना ॥ ११ ॥

रयणुव्वसणं कुमाराइ आणयाइ उज्जोय चउरहिआ ॥
अपज्ज सिरिअव्व नवसयमिगिदि पुढविजलतरु विगले ॥ १२ ॥

छनवइ सासणि विणु सुहम तेर केइ पुण विति चउनवइ ॥
तिरिअ नरा उहिं विणा तणु पज्जंति न जंति जओ ॥ १३ ॥

ओहुं पणिंदि तसे गइ तसे जिणिकार नरति गुच्च विणा ॥
वण वय जोगे ओहो उरले नरभंगु तंम्मिस्से ॥ १४ ॥

आहार छग विणाहे चउदससउ मिच्छि जिण पणग हीणं ॥
सासणि चउनवइ विणा तिरिअ नराउ सुहुमतेर ॥ १५ ॥

सनत्कुमार देवलोकसे यावत् आठवें सहस्रार देवलोक तक रत्नप्रभा नारकी कि परे बंध स्वामीत्व समझना ॥ आनत वगैरह शेष देवोंमें उद्योत चतुष्क विना बंध स्वामीत्व कहना ॥ अपर्याप्ता तिर्यंचकी तरह १०९ प्र० का बंध एकेन्द्रिय जाति, पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय और विकलेन्द्रियमें मिथ्यात्व गु० में कहना ॥ १२ ॥ सास्वादन गु० में सुक्ष्मादि तेरह प्र० विना ९६ प्र० का बंध एकेन्द्रियादिको होता है. कोइ आचार्य तिर्यंच और मनुष्य आयुः विना ९४ प्र० का बंध कहते हैं. क्यों कि वे इस गु० में शरीर पर्याप्ति पूर्ण नही करते ॥ १३ ॥ पंचेन्द्रिय जाति और त्रस कायमें कर्मस्तव ओघ बंधकी तरह कहना। गति त्रसमें जिन एकादश, मनुष्यत्रिक और ऊंच गोत्र विना १०५ प्र० का बंध कहना ॥ मनयोग, वचनयोग और औदारिक काय योगमें कर्मस्तवकी तरह तेरह गु० का बंध कहना ॥ औदारिक मिश्र काय योगमें ॥१४॥ आहारकादि छे प्र० वर्जके ११४ प्र० का ओघे बंध होता है ॥ मिथ्यात्व गु० में जिन पंचक हीन होनेसे १०९ प्र० का बंध होता है ॥ सास्वादन गु० में तिर्यंचायुः, मनुष्यायुः और सुक्ष्मादि तेरह प्र० विना ९४ प्र० का बंध होता है ॥ १५ ॥

अड उवसमि चउ वेअगि खइए इक्कार मिच्छतिगिदेसे ॥
सुहुमि सठाणं तेरस आहारगि निअ निअ गुणोहो ॥ २० ॥

परमुवसमिवट्टता आउनबंधंति तेण अजय गुणे ॥
देव मणु आउहिणो देसाइसु पुण सुराउ विणा ॥ २१ ॥

ओहे अट्ठार सयं आहार दुगूण माइलेस तिगे ॥
तं तित्थोण मिच्छे साणाइसु सव्वहिं ओहो ॥ २२ ॥

तेउ निरय नवूणा उज्जोअ चउ निरय बार विणु सुक्का ॥
विणु निरय बार पम्हा अजिणाहारा इमामिच्छे ॥ २३ ॥

उपशम सम्यक्त्व आठ गु० वेदक सम्य० चार गु० क्षायिक सम्य० इग्यारह गु० मिथ्यत्वत्रिक याने मिथ्यात्व, सास्वादन और मिश्र यह मिथ्यात्वत्रिक, देश विरती और सुक्ष्म सपराय अपना २ एकेक गु० होता है आहारिकमें तेरह गु० होते हैं बंध ओघकी तरह कहदेना ॥ २० ॥ परन्तु उपशम सम्यक्त्वमें वर्तता हुवा जीव आयुष्य नही बांधता इसलिये अविरत सम्यक्त्व दृष्टि गु० में देवायु. मनुष्यायुः छोडके अन्य प्रकृत्तिको बांधे और देश विरतादि गु० में देवायुः वर्जके बांधे ॥ २१ ॥ आहारकद्विक वर्जक ११८ प्र० का बंध आगे प्रथमकी तीन लेश्याओंमें होता है ॥ मिथ्यात्व गु० में जिन नाम वर्जके ११७ प्र० का बंध होता है शेष सास्वादनादि गु० में ओघवत् ॥ २२ ॥ तेजो लेश्यामें नरकादि ९ प्र० विना १११ प्र० का बंध होता है ॥ उद्योत चतुष्क, नरकादि १२ प्र० विना १०४ प्र० का बंध शुक्ल लेश्यामें होता है ॥ और नरकादि १२ प्र० विना १०८ प्र० का बंध पद्म लेश्यामें होता है ॥ तीर्थंकर नाम और आहारकद्विक वर्जके मिथ्यात्व गु० में तीनों लेश्याओंका स्व स्व बंध जानना ॥ २३ ॥

सव्व गुणा भव्व सन्निसु ओहु अभव्वा असन्नि मिच्छि समा ॥
सासणि असन्नि सन्निव कम्मण भंगो अणाहारे ॥ २४ ॥
तिसु दुसु सुक्काइ गुणा चउ सग तेरत्ति बंध सामित्तं ॥
देविंदसूरि रइअं नेअं कम्मत्थयं सोउ ॥ २५ ॥ इति

भव्य और सञ्ज्ञीमें सर्व गु० और बंध कर्मस्तववत् ॥ अभव्य और असञ्ज्ञीको मिथ्यात्व गु० समान बंध होता है ॥ असंज्ञीको सास्वादन गु० में बंध सञ्ज्ञीवत् कहना ॥ अनाहारकमें कार्मण काययवत् बंध कहना ॥ २४ ॥ तीन लेश्यामें प्रथमके चार गु० हैं. दो लेश्यामें सात गु० हैं. और शुक्ल लेश्यामें तेरह गु० होते हैं. इस तरह बंध स्वामित्व नामक कर्मग्रन्थ श्री देवेन्द्रसूरीने रचा है यह ग्रन्थ कर्मस्तव नामा दूसरे कर्मग्रन्थको समझ कर अध्ययन करना चाहिये ॥ २५ ॥

इति बंध स्वामित्व नामक तीसरा कर्मग्रन्थ.

॥ समाप्तम् ॥

मार्गणा.	गुणस्था०	ओघ बंध.	मि. १	सा० २	मि० ३	अ. ४	दे. ५	प्र. ६	अ. ७	नि. ८	अ. ९	सू. १०	उ. ११	क्षी. १२	स. १३	अ. १४
नरकगति, रत्नप्रभादि ३	४	१०१	१००	९६	७०	७२										
पंकप्रभादि ३	४	१००	१००	९६	७०	७१										
तम तमप्रभा	४	९९	९६	९१	७०	७०										
तिर्यंचपर्याप्ता,	५	११७	११७	१०१	६९	७०	६६									
तिर्यंच अप०	१	१०९	१०९													
मनुष्यपर्याप्ता, औदारिकका०	१४	१२०	११७	१०१	६९	७१	६७	६३	५९	५८	२२	१७	१	१	१	०
मनुष्य अपर्याप्ता	१	१०९	१०९													
देवगति, सौधर्म, ईशान, वैक्रिय०	४	१०४	१०३	९६	७०	७२										
भ० ज्यो० व्यं०	४	१०३	१०३	९६	७०	७१										
सनत० से ६ देव,	४	१०१	१००	९६	७०	७२										
आनतसे ९ ग्रै०	४	९७	९६	९२	७०	७२										
अनुत्तर	१	७२				७२										
एके. द्वि. त्रि, चौ. पृथ्वी, अप, वन.	२	१०९	१०९	९६												
पंचेन्द्रि० त्रस, मन० वचन. चक्षु० १४ १४ १३ १३ १२ अचक्षु. शुक्ल.ले. भव्य. संज्ञी. आहा० १२ १३ १४ १४ १३	१४	१२०	११७	१०१	७४	७७	६७	६३	५९	५८	२२	१७	१	१	१	०

यथाख्यात	४												१	१	१	०
देशविरति	१	६७					६७									
तेजोलेशी	७	१११	१०८	१०१	७४	७७	६७	६३	५८							
पद्मलेशी	७	१०८	१०५	१०१	७४	७७	६७	६३	५८							
अभव्य, मिथ्यात्व	१	११७	११७													
औपशमिक	८	७७				७५	६६	६२	५८	५८=५६=२६	२२	१७	१			
सास्वादन	१	१०१		१०१												
क्षयोपशम	४	७९				७७	६७	६३	५९							
क्षायिक	११	७७				७७	६७	६३	५८	५८=५६=२६	२२	१७	१	१	१	०
मिश्र	१	७४			७४											
अणाहारी	५	११२	१०७	९४		७५									१	०

॥ इति तृतीय कर्मग्रन्थ यंत्र समाप्तं ॥

॥ श्री वीराय नमः ॥

अथ षडशीतिनाम चतुर्थ कर्मग्रन्थ.

नमिअ जिणं जिअ मग्गण गुणठाणुवओग जोग लेसाओ ॥
बंधप्पबहू भावे संखिज्जाइ किमवि वुच्छं ॥ १ ॥
नमिअ जिणं वत्तव्वा चउदस जियठाणएसु गुणठाणा ॥
जोगु वओग लेसा बंधो दओ दीरणा सत्ता ॥ १ ॥
इह सुहुम बायरेगिंदि बि ति चउ असन्नि सन्नि पंचिंदी ॥
अपजत्ता पज्जत्ता कमेण चउदस जियट्ठाणा ॥ २ ॥
बायर असन्नि विगले अपज्जि पढम बिअ सन्नि अपजत्ते ॥
अजय जुअ सन्नि पज्जे सव्वे गुण मिच्छ सेसेसु ॥ ३ ॥

जिनेश्वरको नमस्कार करके जीवस्थान, मार्गणास्थान, गुणस्थान, उपयोग, योग, लेश्या, बंध, अल्पाबहुत्व, भाव और संख्यातादिक संक्षेपसे कहूंगा ॥ १ ॥ जिनेश्वरको नमस्कार करके चौदह जीवस्थानपर गुणस्थानक, योग, उपयोग, लेश्या, बंध, उदय, उदीरणा और सत्ताको कहूंगा ॥ १ ॥ इस संसारमें सूक्ष्म एकेन्द्रिय बादर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय इनको पर्याप्ता, अपर्याप्ता गिननेसे क्रमशः चौदह जीवस्थान होते हैं ॥ २ ॥ अपर्याप्ता बादर एकेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्ता और विकलेन्द्रिय अपर्याप्ता इनमें प्रथमके दो गु० होते हैं ॥ अपर्याप्ता संज्ञी पंचेन्द्रियमें अविरति सहित ३ गु० होते हैं ॥ संज्ञी पंचेन्द्रियमें सब गु० होते हैं और शेष जीवस्थानोंमें मिथ्यात्व गु० होता है ॥ ३ ॥

अपजत्त छक्कि म्मुरल मीस जोगा अपज्ज सन्निसु ॥
ते स वि उव्वैमीस एसु तणु पज्जेसु उरल मन्ने ॥ ४ ॥
सव्वे सन्निपजते उरलं सुहुमे सभासं तं चउस्र ॥
वायरि स वि उव्विदुगं पजसन्निसु वार उवओगा ॥ ५ ॥
पज्ज चउरिंदि असन्निसु दुदंस दुअनाण दससु चक्खु विणा ॥
सन्नि अपज्जे मण नाण चक्खु केवल दुग विहुणा ॥ ६ ॥

जीवस्थाने योगः ॥ छे अपर्याप्ता जीवोंमें कार्मण और औदारिक मिश्र योग होता है. अपर्याप्ता संज्ञी पंचेन्द्रियमें वैक्रिय मिश्र सहित तीन योग होते है. किसी आचार्यका मत है कि शरीर पर्याप्ति पूर्ण करनेपर औदारिक काययोग भी होता है ॥ ४ ॥ संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्ता में सब योग होते हैं. सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्या० में औदारिक काययोग होता है. विकलेन्द्रिय पर्याप्ता और असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तामें औदा० काय० और वचन योग होता है. बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तामें वैक्रिय द्विक सहित तीन योग होते है ॥ जीवस्थाने उप० ॥ पर्याप्ता संज्ञी पंचेन्द्रियमें बारह उपयोग है ॥ ५ ॥ पर्याप्ता चौरिन्द्रिय, पर्याप्ता असंज्ञी पंचेन्द्रियमें दो दर्शन और दो अज्ञान होते है चार एकेन्द्रिय दो बेरिन्द्रिय. दो तेइन्द्रिय. चौरिन्द्रिय अप० और असंज्ञीय पंचेन्द्रिय अप० में चक्षुदर्शन विना तीन उपयोग होते हैं और संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तामें मन.पर्यवज्ञान, चक्षुदर्शन, केवल द्विक विना आठ उपयोग होते हैं ॥ ६ ॥

सन्नि दुगि छलेस अपज्ज बायरे पढम चउ ति सेसेसु ॥
सत्तट्ठ बंधुदीरण संतु दया अट्ठ तेरससु ॥ ७ ॥
सत्तट्ठ छेग बंधा संतु दया सत्त अट्ठ चत्तारि ॥
सत्तट्ठ छ पंच दुगं उदीरणा सन्नि पज्जते ॥ ८ ॥
गइ इंदिए य काए जोए वेए कसाय नाणेसु ।
संजम दंसण लेसा भव सम्मे सन्नि आहारे ॥ ९ ॥

सुर नर तिरि निरय गई इग बिअ तिअ चउ पणिंदि छक्काया ।
भू जल जलणा निल वण तसाय मण वयण तणु जोगा ॥१०॥

जीवस्थाने लेश्या, बन्ध, उदय, उदीरणा, सत्ता—संज्ञीमें छे लेश्या अपर्याप्ता बादर एकेन्द्रियमें प्रथमकी चार लेश्या और बाकी जीवस्थानमें तीन लेश्या होती है ॥ बंध और उदीरणामें सात आठ कर्म और सत्ता तथा उदयमें आठ कर्म तेरा जीवस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्ता सिवाय होते है ॥ ७ ॥ संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तामें ७-८-६-१ का कर्मबन्ध होता है. सत्ता और उदय सात, आठ और चार कर्मकी और उदीरणा ७-८-६-५-२ कर्मकी होती है । ८॥ मार्गणास्थान—गति ४ इन्द्रिय ५ काय ६ योग ३ वेद ३ कषाय ४ ज्ञान ८ संयम ७ दर्शन ४ लेश्या ६ भव्य २ सम्यक्त्व ६ संज्ञी २ आहारी २ सर्व ६२ ॥ ९ ॥ गति ४—देवता, मनुष्य, तिर्यंच और नारकी. इन्द्रिय ५—एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय. काय ६—पृथ्वीकाय अप्प तेउ वाउ वनस्पति० और त्रसकाय. योग ३—मनयोग वचनयोग काययोग ॥१०।

नं	जीवस्थान	गुणस्था० १४	योग १५	उप० १२	लेश्या ६	बंध	उदय	उदीरणा	सत्ता	अल्पबहुत्व	
१	सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्या०	१	२-३	३	३	७-८	८	७-८	८	असंख्यगुणा	१३
२	,, ,, पर्याप्ता	१	१	३	३	७-८	८	७-८	८	संख्यगुणा	१४
३	बादर ,, अपर्याप्ता	१-२	२-३	३	४	७-८	८	७-८	८	असंख्यगुणा	१२
४	,, ,, पर्याप्ता	१	३	३	३	७-८	८	७-८	८	अनंतगुणा	११
५	द्वीन्द्रिय अपर्याप्ता	१-२	२-३	३	३	७-८	८	७-८	८	विशेषाधिक	१०
६	,, पर्याप्ता	१	२	३	३	७-_	८	७-८	८	,,	५
७	त्रीन्द्रिय अपर्याप्ता	१-२	२-३	३	३	७-८	८	७-८	८	,,	९
८	,, पर्याप्ता	१	२	३	३	७-८	८	७-८	८	,,	६
९	चौरिन्द्रिय अपर्याप्ता	१-२	२-३	३	३	७-८	८	७-८	८	,,	८
१०	,, पर्याप्ता	१	२	४	३	७-८	८	७-८	८	संख्यगुणा	३
११	असंज्ञी पंचे० अपर्याप्ता	१-२	२-३	३	३	७-८	८	७-८	८	असंख्यगुणा	७
१२	,, ,, पर्याप्ता	१	२	४	३	७-८	८	७-८	८	विशेषाधिक	४
१३	संज्ञी ,, अपर्याप्ता	[illegible]	३	८	६	७-८	८	७-८	८	असंख्यगुणा	२
१४	,, ,, पर्याप्ता	१४	१५	१२	६	७-८ ६-१	७-८ ४	७-८ ६-५ २	७-८ ४	सबसे स्तोक	१

वेय नरि त्थि नपुंसक कसाय कोह मय माय लोभत्ति ॥
मइ सु अवहि मण केवल विभंग मइ सुअ नाण सागारा ॥ ११ ॥

सामाइअ छेअ परिहार सुहुम अहक्खाय देसजय अजया ॥
चक्खु अचक्खु ओही केवल दंसण अणागारा ॥ १२ ॥

किण्हा नीला काऊ तेऊ पम्हा य सुक्क भव्वियरा ॥
वेअग खइगु वसम मिच्छ मीस सासाण सन्नियरे ॥ १३ ॥

आहारेयर भेआ सुर निरय विभंग मइ सुओहिदुगे ॥
सम्मत्त तिगे पम्हा सुक्का सन्नीसु सन्निदुगं ॥ १४ ॥

वेद ३ पुरुषवेद, स्त्रीवेद और नपुंसक० कषाय ४ क्रो[illegible] मान, माया और लोभ. ज्ञान ८ मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अ० और विभंग ज्ञान यह साकार उपयोग है. ॥ ११ ॥ संयम सामायक० छेदोपस्थापनीय परिहार विशुद्धि सूक्ष्म संपराय यथाख्यात देशविरति, अविरति ॥ दर्शन ४ चक्षु दर्शन, अ० दर्शन. अवधि दर्शन और केवल दर्शन यह अनाकार उपयोग १२ ॥ लेश्या ६ कृष्ण० नील० कापोत० तेजो० पद्म और शुक्ल [illegible]. अभव्य ॥ सम्यक्त्व ६ वेदक याने क्षयोपशमिक, क्षायिक उपशमिक, मिथ्यात्व मीश्र और सास्वादन ॥ सन्नी, असन्नी आहारी, अनाहारी । एवं ६२ मार्गणा ॥ मार्गणा विषय जीव [illegible] [illegible] नरकगति, विभंग ज्ञान, मति ज्ञान श्रुत ज्ञान, अवधिज्ञान अवधि दर्शन [illegible] पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या, और सं[illegible] [illegible] संज्ञि पंचेन्द्रिय पर्याप्ता और अपर्याप्ता ॥

समऽसन्नि अपज्ज जुयं नरे सबायर अपज्ज तेऊए ॥
थावर इगिंदि पढमा चउ बार असन्नि दु दु विगले ॥ १५ ॥
दस चरिम तसे अजया हारग तिरि तणु कसाय दु अनाणे ॥
पढमतिलेसा भवि अर अचक्खु नपु मिच्छि सव्वेवि ॥ १६ ॥
पज सन्नी केवल दुगे संजम मणनाण देस मण मीसे ॥
पण चरिम पंज्ज वयणे तिय छव पज्जिअर चक्खुमि ॥ १७ ॥
थी नर पणिंदि चरमा चउ अणहारे दुसन्नि छ अपज्जा ॥
ते सुहुम अपज्जं विणा सासणि इतो गुणे वुच्छं ॥ १८ ॥

मनुष्य गतिमें पूर्वोक्त दो और लब्धी अपर्याप्ता असंज्ञि युक्त होनेसे तीन भेद ॥ तेजो लेश्यामें संज्ञिद्विक और बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्ता सहित तीन भेद। पांच स्थावर और एकेन्द्रियमें प्रथमके चार जीव भेद होते हैं ॥ असंज्ञि मार्गणमे बारह जीव भेद और विकलेन्द्रिय मार्गणामें दो दो जीव भेद हैं ॥ १५ ॥ त्रसकायमें अन्तके दश जीव भेद हैं ॥ अविरति चारित्र, आहारी तिर्यंच गति, काययोग, कषाय, दोअज्ञान, प्रथमकी तीन लेश्या, भव्य, अभव्य, अचक्षु दर्शन नपुंसक वेद और मिथ्यात्व मार्गणामें सर्व जीवस्थान होते हैं ॥ १६ ॥ केवलज्ञान केवलदर्शन, पांच संयम, मन.पर्यवज्ञान, देशविरति, मनयोग और मिश्र सम्यक्त्वमें पर्याप्ता संज्ञि पंचेन्द्रिय एक जीव स्थान है ॥ वचनयोगमें अन्तके पर्याप्ता पांच जीवस्थान है ॥ चक्षुदर्शनमें पर्याप्ता तीन जीवस्थान है या तीन पर्याप्ता अपर्याप्ता मिलके छे जीव भेद भी होते हैं ॥१७॥ स्त्रीवेद पुरुषवेद और पचेन्द्रियमें अन्तके चार जीव स्थान होते हैं ॥ अणाहारी मार्गणामें आठ जीव स्थान संज्ञि द्विक पर्याप्ता अपर्याप्ता और छे अपर्याप्ता॥ सूक्ष्म अपर्याप्ताके विना सात जीव स्थान सास्वादन सम्यक्त्वमें होते हैं ॥ मार्गणा विषे गुणस्थानद्वार कहेंगे ॥ १८ ॥

समऽसन्नि अपज्ज जुयं नरे सबायर अपज्ज तेऊए ॥
थावर इगिंदि पढमा चउ बार असन्नि दु दुविगले ॥ १५ ॥
दस चरिम तसे अजया हारग तिरि तणु कसाय दु अनाणे ॥
पढमतिलेसा भवि अर अचक्खु नपु मिच्छि सव्वेवि ॥ १६ ॥
पज सन्नी केवल दुगे संजम मणनाण देस मण मीसे ॥
पण चरिम पज्ज वयणे तिय छव पज्जिअर चक्खुमि ॥ १७ ॥
थी नर पणिदि चरमा चउ अणहारे दुसन्नि छ अपज्जा ॥
ते सुहुम अपज्ज विणा सासणि इतो गुणे वुच्छं ॥ १८ ॥

मनुष्य गतिमें पूर्वोक्त दो और लब्धी अपर्याप्ता असंज्ञि युक्त होनेसे तीन भेद ॥ तेजो लेश्यामें संज्ञिद्विक और बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्ता सहित तीन भेद। पांच स्थावर और एकेन्द्रियमें प्रथमके चार जीव भेद होते हैं ॥ असंज्ञि मार्गणमें बारह जीव भेद और विकलेन्द्रिय मार्गणामें दो दो जीव भेद हैं ॥ १५ ॥ त्रसकायमें अन्तके दश जीव भेद हैं ॥ अविरति चारित्र, आहारी तिर्यंच गति, काययोग, कषाय, दोअज्ञान, प्रथमकी तीन लेश्या, भव्य, अभव्य, अचक्षु दर्शन, नपुंसक वेद और मिथ्यात्व मार्गणामें सर्व जीवस्थान होते हैं ॥ १६ ॥ केवलज्ञान केवलदर्शन, पांच संयम, मन.पर्यवज्ञान, देशविरति, मनयोग और मिश्र सम्यक्त्वमें पर्याप्ता संज्ञि पंचेन्द्रिय एक जीव स्थान है ॥ वचनयोगमें अन्तके पर्याप्ता पांच जीव स्थान है ॥ चक्षुदर्शनमें पर्याप्ता तीन जीवस्थान है या तीन पर्याप्ता अपर्याप्ता मिलके छे जीव भेद भी होते हैं ॥१७॥ स्त्रीवेद पुरुषवेद और पंचेन्द्रियमें अन्तके चार जीव स्थान होते हैं ॥ अणाहारी मार्गणामें आठ जीव स्थान संज्ञि द्विक पर्याप्ता अपर्याप्ता और छे अपर्याप्ता ॥ सूक्ष्म अपर्याप्ताके विना सात जीव स्थान सास्वादन सम्यक्त्वमें होते हैं ॥ मार्गणा विषे गुणस्थानद्वार कहेंगे ॥ १८ ॥

असन्निसु पढम दुगं पढमतिलेसासु छच्च दुसु सत्त ।
पढमंतिमं दुग अजंया अणहारे मग्गणासु गुणा ॥ २३ ॥
सच्चे अर मीसं असच्च मोसमण वयं विउंव्वि आहारा ।
उरलं मीसा कम्मण इअ जोगा कम्म अणाहारे ॥ २४ ॥
नरगइ पणिंदि तस तणु अचक्खु नर नपु कसाय सम्मदुगे ।
सन्नि छलेसा हारग भव मइ सुअ ओहि दुगे सव्वे ॥ २५ ॥
तिरि इत्थि अजय सासण अनाण उवसम अभव्व मिच्छेसु ।
तेराहारदुगूणा ते उरल दुगूण सुरनिरए ॥ २६ ॥

असंज्ञीमें प्रथमके दो गु० ॥ प्रथमकी *तीन लेश्यामें छे गु० ॥ दो लेश्या (तेजोपद्म) में सात गु० ॥ अनाहारक मार्गणामें आदि और अन्तके दो दो गु० और अविरति गु० एवं पांच गु० होते हैं ॥ २३ ॥ मार्गणाविषे योग सत्यमन० असत्यमन० मिश्रमन० और असत्य मृषामनयोग (व्यवहार) एवं चार वचन. वैक्रिय काययोग, आहारककाय० औदारिक काययोग एवं तीन मिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग एवं १५ योग ॥ अनाहारकमार्गणामें कार्मण काययोग होता है ॥ २४ ॥ मनुष्य, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, काययोग अचक्षुद० पुरुषवेद, नपुंसकवेद, कषाय, सम्यक्त्वद्विक (क्षायिक, क्षयोप०) संज्ञी, छे लेश्या, आहारी, भव्य, मतिज्ञान श्रुतज्ञान, और अवधिद्विकमें सबयोग होते हैं ॥ २५ ॥ तिर्यंचगति, स्त्रीवेद, अविरति, सास्वादन तीन अज्ञान, उपशम सम्य० अभव्य और मिथ्यात्वमें आहारकद्विक विना तेरह योग होते हैं ॥ देवता और नारकीमें औदारिकद्विक विना पूर्वोक्त ग्यारहयोग होते हैं ॥ २६ ॥

---

* आवश्यक निर्युक्ति पृ० ३३८१ में [illegible] लिखा है कि, सम्यक्त्व की प्राप्ति सब लेश्यामें होती है [illegible] चारित्रकी प्राप्ति पिछली तीन शुद्ध लेश्याओंमें होती है परन्तु चारित्र प्राप्त होनेपर अन्य कोई भी लेश्या आ सकती है.

असन्निसु पढम दुगं पढमतिलेसासु छच्च दुसु सत्त ।
पढमंतिम दुग अजया अणहारे मग्गणासु गुणा ॥ २३ ॥
सच्चे अर मीसं असच्च मोसमण वय विउव्वि आहारा ।
उरलं मीसा कम्मण इअजोगा कम्म अणाहारे ॥ २४ ॥
नरगइ पणिंदि तस तणु अचक्खु नर नपु कसाय सम्मदुगे ।
सन्नि छलेसा हारग भव मइ सुअ ओहि दुगे सव्वे ॥ २५ ॥
तिरि इत्थि अजय सासण अनाण उवसम अभव्व मिच्छेसु ।
तेराहारदुगूणा ते उरल दुगूण सुरनिरए ॥ २६ ॥

असंज्ञीमें प्रथमके दो गु० ॥ प्रथमकी *तीन लेश्यामें छे गु० ॥ दो लेश्या (तेजोपद्म) में सात गु० ॥ अनाहारक मार्गणामें आदि और अन्तके दो दो गु० और अविरति गु० एवं पांच गु० होते हैं ॥ २३ ॥ मार्गणाविषे योग सत्यमन० असत्यमन० मिश्रमन० और असत्य मृषामनयोग (व्यवहार) एवं चार वचन. वैक्रिय काययोग, आहारककाय० औदारिक काययोग एवं तीन मिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग एवं १५ योग ॥ अनाहारकमार्गणामें कार्मण काययोग होता है ॥ २४ ॥ मनुष्य पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, काययोग अचक्षुद० पुरुषवेद, नपुंसकवेद, कषाय, सम्यक्त्वद्विक (क्षायिक, क्षयोप०) संज्ञी, छे लेश्या आहारी, भव्य, मतिज्ञान श्रुतज्ञान, और अवधिद्विकमें सब योग होते हैं ॥ २५ ॥ तिर्यचगति, स्त्रीवेद, अविरति, सास्वादन तीन अज्ञान, उपशम सम्य० अभव्य और मिथ्यात्वमें आहारकद्विक विना तेरह योग होते हैं ॥ देवता और नारकीमें औदारिकद्विक विना पूर्वोक्त ग्यारहयोग होते हैं ॥ २६ ॥

* आवश्यक निर्युक्ति पृ० ३८१ में भद्रबाहु स्वामी लिखते हैं कि, सम्यक्त्व की प्राप्ति सब लेश्यामें होती है चारित्रकी प्राप्ति पिछली तीन शुभ लेश्यामें होती है परन्तु चारित्र प्राप्त होनेपर अन्य कोई भी लेश्या आ सकती है.

कम्मु रलदुगंथावरि ते सविउव्विदुगपंचं इगि पवणे ।
छ असन्नि चरिमवइजुअ ते विउव दुगूणचउ विगले ॥ २७ ॥
कम्मुरलमीस विणुमण वइ समइअ छेअ चक्खु मणनाणे ।
उरल दुगकम्मपढमंतिम वण वयं केवल दुगंमि ॥ २८ ॥
मण वइ उरला परिहारि सुहुमि नव ते उ मीसि सविउव्वा ।
देसे स विउव्विदुगा सकम्मुरलमीसअहखाए ॥ २९ ॥
ति अनाण नाणपण चउ दंसण बार जिअ लक्खणुवओगा ।
विणु मणनाण दुकेवलनव सुर तिरि निरिय अजएसु ॥ ३० ॥

थावर सिवाय चार स्थावर मार्गणामें तीन योग औदारिक द्विक और कार्मण ॥ पंचेन्द्रिय जाति और वायुकायमें वैक्रियद्विक सहित पांच योग ॥ असंज्ञि मार्गणामें पूर्वोक्त पांच और व्यवहार वचनयोग एवं छे योग ॥ और वैक्रियद्विक विना पूर्वोक्त चार योग विकलेन्द्रियमें ॥ २७ ॥ मनयोग, वचनयोग, सामायिक छेदोपस्थापनिय चक्षुदर्शन और मन पर्यवज्ञानमें कार्मण और औदारिक मिश्र सिवाय तेरह योग और केवलद्विकमें औदारिकद्विक कार्मण काययोग और मन वचनके आदि तथा अन्तके योग होते हैं ॥ २८ ॥ परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म संपराय चारित्रमें मन योग ४ वचनयोग ४ और औदारिक काय एवं नव योग होते हैं । वैक्रिय काययोग सहित दश योग मिश्रमें होते हैं । वैक्रियद्विक सहित ग्यारह योग देशविरतिमें होते हैं ॥ कार्मण और औदारिक मिश्र सहित ग्यारह योग यथाख्यातमें होते हैं ॥ २९ ॥ [illegible] पांच ज्ञान और चार दर्शन [illegible] मन पर्यवज्ञान और केवलद्विक [illegible] नव [illegible] और अविरतिमें होते हैं । ३०

तेस जोए वेए सुक्का हारे नरे पणिंदि सन्नि भवि सव्वे ॥
नयणेअर पण लेसा कसाय दस केवलदुगूणा ॥ ३१ ॥
चउरिंदि असन्नि दुअनाण दु दंस इग बि ति थावरि अचक्खु ॥
तिअनाण दंसणदुगं अनाणतिगि अभवि मिच्छदुगे ॥ ३२ ॥
केवल दुगे निअदुगं नव तिअ अनाण विणु खइअ अह खाए ॥
दंसणनाणतिगं देसि मीसि अनाणमीसंतं ॥ ३३ ॥
मणनाण चक्खु वज्जा अणहारे तिन्नि दंस चउनाणं ॥
चउनाण संजमोवसम वेअगे ओहि दंसे अ ॥ ३४ ॥

त्रयकाय, योग ३ वेद ३ शुक्ल लेश्या, आहारी, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, संज्ञी और भव्य मार्गणामें सब उपयोग होते हैं॥ चक्षुदर्शन अचक्षु दर्शन, पांच लेश्या और कषाय मार्गणामें केवलद्विक सिवाय दश उपयोग होते हैं॥ ३१ ॥ चौरिन्द्रिय और असंज्ञि मार्गणामें दो अज्ञान और दो दर्शन होते हैं॥ एकेन्द्रिय, बेरिन्द्रिय, तेरिन्द्रिय और स्थावर मार्गणामें चक्षुदर्शन विना तीन उपयोग होते हैं और तीन अज्ञान दो दर्शन एवं पांच उपयोग. तीन अज्ञान, अभव्य और मिथ्यात्वद्विक (मिथ्यात्व सास्वादन) में होता है॥ ३२ ॥ केवलद्विकमें स्वोपयोग होता है॥ क्षायिक सम्य० और यथाख्यात चा० में तीन अज्ञान विना नव उपयोग होते हैं॥ देश विरतिमें तीन दर्शन और तीन ज्ञान होते हैं॥ मिश्र मार्गणामें पूर्वोक्त छे उपयोग परन्तु ज्ञान, अज्ञान मिश्रीत हैं॥ ३३ ॥ मन.पर्यव और चक्षुदर्शन विना दश उपयोग अनाहारीमें होते हैं॥ तीन दर्शन और चार ज्ञान एवं ७ उपयोग चार ज्ञान, चार संयम, उपशम सम्य० वेदक सम्य० और अवधिदर्शनमें होते हैं ॥ ३४ ॥

दो तेर तेर बारस मणे कमा अट्ठ दुचउ चउ वयणे ॥
चउ दु पण तिन्नि काये जिअ गुण जोगो वओग अन्ने ॥ ३५ ॥
छसु लेसासु सठाणं एगिंदि असन्नि भू दग वणेसु ॥
पढमा चउरो तिन्नि उ नारय विगलग्गि पवणेसु ॥ ३६ ॥
अहखाय सुहुम केवल दुगि सुक्का छवि सेसठाणेसु ॥
नर निरय देव तिरिआ थोवा दु असंख णंत गुणा ॥ ३७ ॥
पण चउ ति दु एगिंदि थोवा तिन्नि अहिया अणंत गुणा ॥
तस थोव असंखग्गी भूजल निल अहिय वण णंता ॥ ३८ ॥

अन्य आचार्य मनयोगमें जीवस्थान दो गुणस्थान १३ योग १३ उपयोग १२ वचनयोगमें जीव० ८ गु० दो, योग चार उपयोग चार, काययोगमें जीव० ४ गु० दो, योग पांच, और उपयोग तीन मानते हैं ॥ ३५ ॥ मार्गणा विषय लेश्या. छे लेश्या मार्गणामें अपनी अपनी लेश्या ॥ एकेन्द्रिय, असंज्ञि, पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकायमें प्रथमकी चार लेश्या, नारकी, विकलेन्द्रिय, अग्निकाय और वायुकायमें तीन लेश्या, ॥ ३६ ॥ यथाख्यात चा० सूक्ष्म संपराय चा० और केवलद्विकमें शुक्ल लेश्या होती है ॥ बाकी रहे ४१ मार्गणामें छेओ लेश्या होती है ॥ अल्पाबहुत्व सबसे स्तोक मनुष्य, नारकी असंख्यात गुणा, देवता असं० गुणा और तिर्यंच अनन्त गुणा ॥ १ ॥ ३७ ॥ पंचेन्द्रिय सबसे स्तोक, चउरिन्द्रिय तेइन्द्रिय, बेइन्द्रिय अनुक्रमसे परस्पर अधिक और एकेन्द्रिय अनन्तगुणा । २ । सबसे स्तोक त्रस अग्नि काय असंख्य गुणा पृथ्वीकाय विशेषाधिक [illegible]

मण वयण काय जोगी थोवा असंखगुणा अणंत गुणा ॥
पुरिसा थोवा इत्थी संख गुणा णंत गुणा कीवा. ॥ ३९ ॥

माणी कोइ मायी लोभी अहिअ मण नाणिणो थोवा ॥
ओहि असंखा मइसुअ अहिअ सम असंख विभंगा ॥ ४० ॥

केवलीणो णंतगुणा मइ सुअ अन्नाणि णंतगुणतुल्ला ॥
सुहुमा थोवा परिहार संख अहखाय संखगुणा ॥ ४१ ॥

छेय समइय संख देस असंख गुणा णंतगुण अजया ॥
थोव असंख दुणंता ओहि नयण केवल अचक्खु ॥ ४२ ॥

मनयोगी स्तोक, वचनयोगी असं० गुणा, काययोगी अनन्त गुणा ॥ ४ ॥ सबसे स्तोक पुरुषवेद, स्त्रीवेद सं० गुणी और नपुंसकवेद अनन्तगुणा ॥ ५ ॥ ३९ ॥ सबसेस्तोक मानी क्रोधी विशे० मायी विशे० लोभी विशेषाधिक ॥ ६ ॥ सबसेस्तोक मन पर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, असं० गु० मति श्रुत ज्ञानी, परस्पर तुल्य अवधिसे वि० विभंगज्ञानी असं० गु० केवलज्ञानी अनत गु० मति श्रुतअज्ञानी अनतगु० और परस्पर तुल्य ॥७॥ सबसेस्तोक सूक्ष्म संपरायचा० परिहारविशुद्धचा० सं० गु० यथाख्यातचा० सं० गु० ॥ ४० ॥ ४१ ॥ छेदोपस्थापनीयचा० सं० गु० सामायिक चा० सं० गु० देशविरति चा० असं० गु० और अविरति अनंतगुणा ॥ ८ ॥ सबसे स्तोक अवधिदर्शनी, चक्षुदर्शनी असं० गु० केवल दर्शनी अनन्त गु० अचक्षु दर्शनी अनन्त गु० ॥ ९ ॥ ४२ ॥

संख्या.	मार्गणा ६२ के नाम.	जीवोंके भेद १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या [illegible]	अल्पा-बहुत्व.	क्रमश. अंक.
१	देवगति	२	४	११	९	६	असं० गु०	३
२	मनुष्यगति	३	१४	१५	१२	६	स्तोक	१
३	तिर्यंचगति	१४	५	१३	९	६	अनंत. गु.	४
४	नरकगति	२	४	११	९	३	असं. गु.	२
५	एकेन्द्रिय	४	२	५	३	४	अनन्तगु०	५
६	बेरिन्द्रिय	२	२	४	३	३	विशेषा	४
७	तेरिन्द्रिय	२	२	४	३	३	विशेषा	३
८	चोरिन्द्रिय	२	२	४	४	३	विशेषा	२
९	पंचेन्द्रिय	४	१४	१५	१२	६	स्तोक	१
१०	पृथ्वीकाय	४	२	३	३	४	विशेषा	३
११	अप्पकाय	४	२	३	३	४	विशेषा	४
१२	तेउकाय	४	१	३	३	३	असं० गु०	२
१३	वायुकाय	४	१	५	३	३	विशेषा	५
१४	वनस्पतिकाय	४	२	३	३	४	अनंतगु०	६
१५	त्रसकाय	१०	१४	१५	१२	६	स्तोक	१
१६	मनयोगी	[illegible]	१३	[illegible]	१२	६	स्तोक	१
१७	वचनयोगी	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	६	असं० गु०	२
१८	काययोगी	[illegible]	[illegible]	१५	[illegible]	६	अनंतगु०	३

४३	अवधिदर्शन	२	९	१५	७	६	स्तोक	१
४४	केवलदर्शन	१	२	७	२	१	अनन्तगु.	३
४५	कृष्णलेशी	१४	६	१५	१०	१	विशेषा	६
४६	नीललेशी	१४	६	१५	१०	१	विशेषा	५
४७	कापोतलेशी	१४	६	१५	१०	१	अनन्तगु.	४
४८	तेजोलेशी	३	७	१५	१०	१	असं. गु.	३
४९	पद्मलेशी	२	७	१५	१०	१	असं. गु.	२
५०	शुक्ललेशी	२	१३	१५	१२	१	स्तोक	१
५१	भव्य	१४	१४	१५	१२	६	अनन्तगु.	२
५२	अभव्य	१४	१	१३	५	६	स्तोक	१
५३	वेदकसम्यक्त्व (क्षयउपशम)	२	४	१५	७	६	असं. गु.	४
५४	क्षायिकसम्य	२	११	१५	९	६	अनन्तगु.	५
५५	उपशमसम्य.	२	८	१३	७	६	संख्यगु	२
५६	मिश्रदृष्टि	१	१	१०	६	६	संख्यगु.	३
५७	सास्वादन	७	१	१३	५	६	स्तोक	१
५८	मिथ्यात्व	१४	१	१३	५	६	अनन्त गु.	६
५९	संज्ञि	२	१४	१५	१२	६	स्तोक	१
६०	असंज्ञि	१२	२	६	४	४	अनन्तगु.	२
६१	आहारी	१४	१३	१५	१२	६	असंगु.	२
६२	अणाहारी	८	५	१	१०	६	स्तोक	१

अभिगहिअ मणभिगहिआ भिनिवेसिय संसइय मणाभोगं ॥
पणमिच्छ वार अविरइ मण करणा निअमु छ जिअ वहो ॥५१॥
नव सोल कसाया पनर जोग इय उत्तराउ सगवन्ना ॥
इग चेउ पण तिगुणेसु चउ ति दु इग पच्चओ बंधो ॥ ५२ ॥
चेउ मिच्छ मिच्छ अविरइ पच्चइआ साय सोल १६ पणतीसा ३५ ॥
जोग विणु ति पच्चइआ हारग जिण वज्ज सेसाओ ॥ ५३ ॥

अभिग्राहिक अनाभिग्राहिक, आभिनिवेशिक, सांशयिक और अनाभोग ॥ एवं पांच मिथ्यात्व ॥ मन और पांच इन्द्रिय इन छे को नियममें न रखना तथा पृथ्व्यादि छे कायका वध करना एव वारह अविरत ॥ ५१ ॥ नव नोकषाय और सोलह कषाय एव पंचीस कषाय और पन्द्रहयोग एवं उत्तर भेद ५७ हैं ॥ प्रथम गु० में मूल चार बंध हेतु० ॥ सास्वादनादि चार गु में तीन बंध हेतु मिथ्यात्वटला ॥ प्रमतादि पांच गु० में दो बंध हेतु अविरतटला ॥ उपशान्तादि तीन गु० में एक योग प्रत्ययिक बंध होता है और अयोगी अबंधक ॥५२॥ १२० प्रकृति विषे मूल बंध हेतु. सातावेदनी चारों हेतुओंसे बंधती है. सास्वादन गु० में जिन सोलह प्र० का बंध विच्छेद होता है वह मिथ्यात्व प्रत्ययिकी है केवल मिथ्यात्वसे ही बंधती है. पैंतीस प्र० जिनका बध विच्छेद मिश्र० अवि० देश० गु० में होता है ये मिथ्यात्व, अविरति प्रत्ययिकी है इन प्रकृतियोंको मिथ्यात्वमें वरतता हुवा जीव मिथ्यात्वसे बांधता है और दूसरे आदि गु० में अविरतसे बांधता है. पूर्वोक्त ५२ और जिननाम, आहारकद्विक विना शेष ६५ प्रकृतिका बंध तीन बंध हेतुओं (मि० अ० क०) से होता है, क्यों कि पहिले गु० में रहा हुवा मिथ्यात्वसे दूसरादि ४ गु० में अविरतसे छट्ठादि ४ गु० में कषायसे बंध होता है ॥ जिननाम बंधका कारण सम्यक्त्व और आहारकद्विकका संयम माना है इसलिये इन तीन प्रकृतियोंकी गणना कषाय हेतुओंमें नहीं की ॥ ५३ ॥

अविरइ इगार तिकसायवज्ज अपमत्ति मीस दुग रहिआ ॥
चउवीस अपुव्वे पुण दुवीस अविउव्वि आहारे ॥ ५७ ॥

अछहास सोलबायरि सुहमे दसवेअ संजलतिविणा ॥
खीणुवसंतिअलोभा सजोगिपुव्वुत्त सग जोगा ॥ ५८ ॥

अपमत्तंता सत्तठ मीस अपुव्वबायरा सत्त ॥
बंधइ छस्सुहुमो एगमुवरिमा बंधगाजोगी ॥ ५९ ॥

आसुहुमं संतुदए अट्ठवि मोह विणु सत्त खीणंमि ॥
चउ चरिम दुग अट्ठउसंते उवसंति सत्तु दए ॥ ६० ॥

अप्रमत्त गु० में आहारकमिश्र और वैक्रियमिश्र विना २४ बंध हेतु है ॥ अपूर्व करण गु० में आहारक और वैक्रिय काययोग विना २२ का बंध हेतु है ॥५७॥ हास्यादि षट् विना सोलह बंध हेतु बादर संपराय गु० में होते है ॥ तीन वेद और संज्वल त्रिक विना दश बंध हेतु सूक्ष्म संपराय गु० में होते है ॥ और संज्वल विना नव बंध हेतु क्षीणमोह और क्षीणमोह गु० में होते है सयोगी गु० में पूर्वोक्त सात योग होते है ॥ ५८ ॥ गु० विषे मूल प्रकृति बंध. प्रथम गु० से अप्रमत्त गु० पर्यंत सात, आठ कर्मका बंध है ॥ मिश्र, अपूर्व- करण, और बादर संपराय गु० में सात कर्मका बंध है ॥ सूक्ष्म संपराय गु० में छ कर्मका बंध है ॥ उपरके तीन गु० (११-१२- १३) मे एक कर्मका बंध है और अयोगी गु० अबंधक है ॥ ५९ ॥ उदय सत्ता. सूक्ष्म संपराय गु० पर्यंत आठों कर्मकी सत्ता और उदय है ॥ मोहनीय कर्म विना सात कर्मकी सत्ता और उदय क्षीण मोह गु० में होती है ॥ अन्तके दो गु० मे चार कर्मकी सत्ता और उदय है और उपशान्त मोह गु० में आठ कर्मकी सत्ता और सात कर्मका उदय होता है ॥ ६० ॥

	१४ गुणस्थान विषय.	जीवभेद १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६	मूल बंध हेतु ४	उत्तर बंध हेतु ५७	मिथ्यात्व ५	अविरत १२	कषाय २५	योग १५	बंध प्रकृति ८	उदय प्र० ८	उदीरणा प्र० ८	सत्ता प्र ८	अल्पबहुत्व.	
१	मिथ्यात्व	१४	१३	५	६	४	५५	५	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	अन० गु०	१४
२	सास्वादन	७	१३	५	६	३	५०	०	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	असं० गु०	१०
३	मिश्र	१	१०	६	६	३	४३	०	१२	२१	१०	७	८	८	८	,, ,,	११
४	अविरति	२	१३	६	६	३	४६	०	१२	२१	१३	७-८	८	७-८	८	,, ,,	१२
५	देशविरति	१	११	६	६	३	३९	०	११	१७	११	७-८	८	७-८	८	,, ,,	९
६	प्रमत	१	१३	७	६	२	२६	०	०	१३	१३	७-८	८	७-८	८	सं० गु०	८
७	अप्रमत	१	११	७	३	२	२४	०	०	१३	११	७-८	८	६	८	,, ,,	७
८	अपूर्वक०	१	९	७	१	२	२२	०	०	१३	९	७	८	६	८	तुल्य	५
९	अनिवृत्ति	१	९	७	१	२	१६	०	०	७	९	७	८	६	८	,,	४
१०	सूक्ष्म सं०	१	९	७	१	२	१०	०	०	१	९	६	८	६-५	८	विशे०	३
११	उपशान्तमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५	८	स्तोक	१
१२	क्षीणमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५-२	७	सं० गु०	२
१३	सयोगी	१	७	२	१	१	७	०	०	०	७	१	४	२	४	,, ,,	६
१४	अयोगी	१	०	२	०	०	०	०	०	०	०	०	४	०	४	अनं० गु०	१३

	१४ गुणस्थान विषय.	जीवभेद १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६	मूल बंध हेतु ४	उत्तर बंध हेतु ५७	मिथ्यात्व ५	अविरत १२	कषाय २५	योग १५	बंध प्रकृति ८	उदय प्र० ८	उदीरणा प्र० ८	सत्ता प्र० ८	अल्पाबहुत्व.	
१	मिथ्यात्व	१४	१३	५	६	४	५५	५	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	अनं० गु०	१४
२	सास्वादन	७	१३	५	६	३	५०	०	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	असं० गु०	१०
३	मिश्र	१	१०	६	६	३	४३	०	१२	२१	१०	७	८	८	८	,, ,,	११
४	अविरति	२	१३	६	६	३	४६	०	१२	२१	१३	७-८	८	७-८	८	,, ,,	१२
५	देशविरति	१	११	६	६	३	३९	०	११	१७	११	७-८	८	७-८	८	,, ,,	९
६	प्रमत	१	१३	७	६	२	२६	०	०	१३	१३	७-८	८	७-८	८	सं० गु०	८
७	अप्रमत	१	११	७	३	२	२४	०	०	१३	११	७-८	८	६	८	,, ,,	७
८	अपूर्वक०	१	९	७	१	२	२२	०	०	१३	९	७	८	६	८	तुल्य	५
९	अनिवृत्ति	१	९	७	१	२	१६	०	०	७	९	७	८	६	८	,,	४
१०	सूक्ष्म सं०	१	९	७	१	२	१०	०	०	१	९	६	८	६-५	८	विशे०	३
११	उपशान्तमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५	८	स्तोक	१
१२	क्षीणमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५-२	७	सं० गु०	२
१३	सयोगी	१	७	२	१	१	७	०	०	०	७	१	४	२	४	,, ,,	६
१४	अयोगी	१	०	२	०	०	०	०	०	०	०	०	४	०	४	अनं० गु०	१३

	१४ गुणस्थान विषय.	जीवभेद १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६	मूल बंध हेतु ४	उत्तर बंध हेतु ५७	मिथ्यात्व ५	अविरति १२	कषाय २५	योग १५	बंध प्रकृति ८	उदय प्र० ८	उदीरणा प्र० ८	सत्ता प्र ८	अल्पबहुत्व.	
१	मिथ्यात्व	१४	१३	५	६	४	५५	५	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	अनं० गु०	१४
२	सास्वादन	७	१३	५	६	३	५०	०	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	असं० गु०	१०
३	मिश्र	१	१०	६	६	३	४३	०	१२	२१	१०	७	८	८	८	,, ,,	११
४	अविरति	२	१३	६	६	३	४६	०	१२	२१	१३	७-८	८	७-८	८	,, ,,	१२
५	देशविरति	१	११	६	६	३	३९	०	११	१७	११	७-८	८	७-८	८	,, ,,	९
६	प्रमत्त	१	१३	७	६	२	२६	०	०	१३	१३	७-८	८	७-८	८	सं० गु०	८
७	अप्रमत्त	१	११	७	३	२	२४	०	०	१३	११	७-८	८	६	८	,, ,,	७
८	अपूर्वक०	१	९	७	१	२	२२	०	०	१३	९	७	८	६	८	तुल्य	५
९	अनिवृत्ति	१	९	७	१	२	१६	०	०	७	९	७	८	६	८	,,	४
१०	सूक्ष्म सं०	१	९	७	१	२	१०	०	०	१	९	६	८	६-५	८	विशे०	३
११	उपशान्तमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५	८	स्तोक	१
१२	क्षीणमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५-२	७	सं० गु०	२
१३	सयोगी	१	७	२	१	१	७	०	०	०	७	१	४	२	४	,, ,,	६
१४	अयोगी	१	०	२	०	०	०	०	०	०	०	०	४	०	४	अनं० गु०	१३

	१४ गुणस्थान विषय.	मार्गणा १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६	मूल बंध हेतु ४	उत्तर बंध हेतु ५७	मिथ्यात्व ५	अविरत १२	कषाय २५	योग १५	बंध प्रकृति ८	उदय प्र० ८	उदीरणा प्र० ८	सत्ता प्र ८	अल्पबहुत्व.	
१	मिथ्यात्व	१४	१३	५	६	४	५५	५	१२	२५	१३	७-८	८	७-८	८	अनं० गु०	१४
२	सास्वादन	७	१३	५	६	३	५०	०	१२	२५	१३	७ ८	८	७-८	८	असं० गु०	१०
३	मिश्र	१	१०	६	६	३	४३	०	१२	२१	१०	७	८	८	८	,, ,,	११
४	अविरति	२	१३	६	६	३	४६	०	१२	२१	१३	७-८	८	७-८	८	,, ,,	१२
५	देशविरति	१	११	६	६	३	३९	०	११	१७	११	७-८	८	७-८	८	,, ,,	९
६	प्रमत्त	१	१३	७	६	२	२६	०	०	१३	१३	७-८	८	७-८	८	सं० गु०	८
७	अप्रमत्त	१	११	७	३	२	२४	०	०	१३	११	७-८	८	६	८	,, ,,	७
८	अपूर्वक०	१	९	७	१	२	२२	०	०	१३	९	७	८	६	८	तुल्य	५
९	अनिवृत्ति	१	९	७	१	२	१६	०	०	७	९	७	८	६	८	,,	४
१०	सूक्ष्म सं०	१	०	७	१	२	१०	०	०	१	९	६	८	६-५	८	विशे०	३
११	उपशान्तमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५	८	स्तोक	१
१२	क्षीणमोह	१	९	७	१	१	९	०	०	०	९	१	७	५-२	७	सं० गु०	२
१३	सयोगी	१	७	२	१	१	७	०	०	०	७	१	४	२	४	,, ,,	६
१४	अयोगी	१	०	२	०	०	०	०	०	०	०	०	४	०	४	अनं० गु०	१३

सास्वादन, मिश्र, अपूर्वकरण, अनिवृत्ति, सूक्ष्मसंपराय, उपशान्तमोह, क्षीणमोह और सयोगी इन आठ गु० में किसी समय जीव होते हैं और किसी समय नहीं होते तथा किसी समय एक जीव होता है किसी समय अनेक जीव होते हैं जिसके भंग ६५६१.

संयोग	गुणस्थान आश्रयी भांगा	एकजीव अनेकजीव आश्रयी भांगा.	जीव तथा गुणस्थान आश्रयी परस्पर भांगा.
असंयोगी	१	१	१
एक संयोगी	८	२	१६
द्वि "	२८	४	११२
त्रि "	५६	८	४४८
चतुः "	७०	१६	११२०
पंच "	५६	३२	१७९२
षट् "	२८	६४	१७९२
सप्त "	८	१२८	१०२४
अष्ट "	१	२५६	२५६
कुल भांगे	२५६	५११	६५६१

बीए केवल जुअलं सम्मं दाणाइ लद्धि पण चरणं ॥
तईए सेसुवओगा पण लद्धि सम्म विरइ दुगं ॥ ६५ ॥

अन्नाण मसिद्धत्ता संजम लेसा कसाय गइ वेआ ॥
मिच्छं तुरिए भव्वा भव्वत्त जिअत्त परिणामे ॥ ६६ ॥

चउ चउ गईसु मीसग परिणामु दएहि चउ सखइएहि ॥
उवसम जुएहिं वा चउ केवलि परिणामुदय खइये ॥ ६७ ॥

खय परिणामे सिद्धा नराण पण जोगु वसम सेढीए ॥
इअ पनर सन्नि वाइअ भेया वीसं असंभविणो ॥ ६८ ॥

क्षायिक भाव नौ भेद, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायक-सम्य० दानादि पांच लब्धी और क्षायिक चारित्र. क्षयोपशमिक भावके १८ भेद केवलद्विक विना १० उपयोग. दानादि पांच लब्धी, क्षयोपशम सम्य० विरतिद्विक देशविरति और सर्व विरति ॥ ६५ ॥ औदयिक भावके २१ भेद. अज्ञान. असिद्धत्व. असंयम, छे लेश्या, चार कषाय, चार गति, तीन वेद और मिथ्यात्व. परिणामिक भाव तीन भेद. भव्यत्व, अभव्यत्व और जीवत्व एवं उत्तर भेद ५३ ॥ ६६ ॥ क्षयोप० परिणा० और औदयिक यह तीन संयोगी भांगा चार गति आश्रयि होता है. क्षायिक भाव सहित चार संयोगी भांगा चार गति आश्रयि ४ भेद तथा औपशमिक सहित चार संयोगी भांगा चार गति आश्रयि चार भेद और परिणामिक, औदयिक, क्षायिक यह तीन संयोगी भांगा केवली में होता है ॥ ६७ ॥ क्षायिक और परिणामिक यह दो संयोगी भांगा सिद्धमें होता है. उपशम श्रेणी करते हुये मनुष्यको पांच सयोगी भांगा होता है. एवं छे सांनिपातिक भावोंमे पन्द्रह भेद होते है ॥ शेष २० सांनिपातिक भाव शुन्य है ॥ ६८ ॥

सम्माइ चउसु तिगँ चउँ भावा चउँ पणुँ वसामगु वसंते ॥
चउँ खीणा पुव्वे तन्नि सेस गुणठाण गेग जिए ॥ ७० ॥
संखिज्जेगमसंखं परित्ते जुत्ते नियं पय जुयतिविहं ॥
एवमणंतंपि तिहा जहन्न मज्झुक्कसा संव्वे ॥ ७१ ॥
लहुसंखिज्जं दुच्चिअ अओपरं मज्झिमंतु जागुरुअं ॥
जंबुद्दीव पमाणय चउ पल्ल परुवणाइ इमं ॥ ७२ ॥
पल्लाणवट्ठिय सलाग पडिसलाग महासलागख्खा ॥
जोअण सहसो गाढा सवेइअंता ससिह भरिआ ॥ ७३ ॥

अविरति सम्यक्त्वदृष्टि आदि चार गु॰ मे तीन या चार भाव पाते हैं. नौ, दश, ग्यारवे गु॰ में चार या पांच भाव होते हैं. क्षीण मोह और अपूर्व करण गु॰ में चार भाव होते हैं और शेष गु॰ में तीन भाव होते है ॥ यह भाव एक जीव आश्रयि कहा हैं ॥ ७० ॥ संख्यातं एक है. असंख्याते के तीन भेद है (१) परित (२) युक्त (३) निजपदयुक्त अर्थात् असंख्यातासंख्यात् ॥ इसी तरह अनन्ते के भी तीन भेद हैं इनमें के तीन तीन भेद जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट एवं सर्व २१ भेद होते हैं ॥ ७१ ॥ लघुसंख्यादोकी है ॥ इससे आगे तीनकी संख्या उत्कृष्टके बीचकी संख्यायें सब मध्यमसंख्याता है ॥ उत्कृष्ट संख्याका स्वरूप जम्बूद्विप प्रमाण चार प्यालोंकी प्ररूपणासे जाना जाता है ॥ ७२ ॥ चारप्याले (१) अनवस्थित (२) शलाका (३) प्रतिशलाका (४) महाशलाका है ॥ चारों प्याले गहरा में एक हजार योजन और उचाइमें जम्बुद्विपकी पद्मवर वेदिका पर्यन्त अथवा साडेआठ योजन प्रमाण इनको शिखा सहित सरसोंसे पूर्ण भरना ॥ ७३ ॥

तो दीव दहिसु इक्किक सरिसवं खिविअ निट्ठिए पढमे ॥
पढमं व तदंतं चिय पुण भरिए तंमि तह खीणे ॥ ७४ ॥

खिप्पइ सलाग पल्लेगु सरिसवो इअ सलाग खवणेणं
पुन्नो बीओ अ तओ पुव्विंपिव तंमि उद्धरिए ॥ ७५ ॥

खीणे सलाग तइए एवं पढमेहिं बीअयं भरसु ॥
तेहिं तइअं तेहिय तुरिअं जा किर फुडा चउरो ॥ ७६ ॥

पढम ति पल्लुद्धरिआ दीव दही पल्ल चउ सरिसवाय ॥
सव्वोवि एगरासी रूवूणो परम संखिज्जं ॥ ७७ ॥

[illegible]

रूवजुअंतु परित्ता संखं लहु अस्स रासि अभ्भासे ॥
जुत्ता संखिज्जं लहु आवलिआ समय परिमाणं ॥ ७८ ॥

उत्कृष्ट संख्यातेमें एकरूप मिलानेसे जघन्य परित असंख्याता होता है ॥ जघन्य परित्तसंख्यातेको रासी अभ्यास करनेसे जघन्ययुक्त असंख्याता होता है ॥ जघन्ययुक्त असंख्याता एक आवलीकाके समयोंका परिमाण है ॥ ७८ ॥

पिछली गाथामें असंख्यातेके चार भेद कह दिये हैं अब उनके शेष भेदोंका स्वरुप बतलाते हैं.

असंख्याता और अनन्तेके मूल तीन२ भेद हैं उनके जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट करनेसे १८ भेद होते है जिसको ७१वी गाथामें दिखाये है ॥ उन छे मूल भेदोंमेंसे दूसरे युक्त असंख्यातेका रासी अभ्यास करनेसे नौ उत्तरभेदोंमेंसे सातवा असं० अर्थात जघन्य असंख्यातासंख्यात होताहै जघन्य असंख्यातासंख्यातमें एकरूप होनेसे पीछेका उत्कृष्ट अर्थात् उत्कृष्टयुक्त असंख्याता होता है. और जघन्य तथा उत्कृष्टयुक्त असंख्याते के बीचकी संख्याको मध्यम युक्त असंख्याता कहते है. उक्त छे मूल भेदोंमेंसे तीसरे असं० असं०का राशी अभ्यास करनेसे प्रथमका ज० परितअनंता होता है. इसमेंसे एक रुप कम करने पर उ० असं० अस. होता है उ० ज० के बीचकी संख्याको मध्यम असं० असं० कहते है.

जघन्य युक्त असंख्यातेमेंसे एकरूप कम करनेसे उत्कृष्ट परित असंख्याता होता है. और जघन्य परित असंख्याता तथा उत्कृष्ट परित असंख्याताके बीचकी सब संख्याओंको मध्यम परित असंख्याता कहते हैं।

पुणतंमि तिवग्गिअए परितणंत लहु तस्स रासिणं ॥
अब्भासे लहु जत्ताणं तं अभव्वजिअमाणं ॥ ८३ ॥

तव्वगे पुण जायइ णंताणंत लहु तंच तिक्खुत्तो ॥
वग्गसु तहवि नतं होइ अणंत खेवे खिवसु छ इमे ॥ ८४ ॥

सिद्धा निगोअ जीवा वणस्सइ कालं पुग्गेला चेव ॥
सव्वमलोगं नहं पुण तिवग्गिओ केवल दुगंमि ॥ ८५ ॥
खित्तेऽणंताणंतं हवेइ जिठंतु ववहरइ मज्झं ॥
इअ सुहुमत्थ विआरो लिहिओ देविंद सूरीहिं ॥ ८६ ॥ इति

फिर उस रासीको तीन वार वर्ग करनेसे जघन्य परितअनन्ता होता है उसका रासी अभ्यास करनेसे जघन्य युक्त अनन्ता होता है। यह अभव्य जीव रासी बराबर है ॥ ८३ ॥ उस ज० युक्त अनन्तेको फिर वर्ग करनेसे जघन्य अनन्तानन्त होता है. उसको फिर तीन वार वर्ग करनेसे भी उ० अनन्तानन्त नहीं होता किन्तु उसमें यह छे अनन्ती वस्तुएं और प्रक्षेप करनी (मिलानी) चाहिये ॥ ८४ ॥ (१) सिद्धके जीव (२) निगोदके जीव (३) वनस्पतिके जीव (४) तीनों कालके समय (५) पुद्गल परमाणु (६) सर्व अलोकाकाश प्रदेश. फिर इन सबको तीन वार वर्ग करे. फिर उसमें केवलज्ञान, केवलदर्शनके पर्याय मिलानेसे उत्कृष्ट अनन्तानन्त होता है. परन्तु मध्यम अनन्तानन्त व्यवहारमें आता है. इस तरह सूक्ष्म अर्थका विचार देवेन्द्रसूरिजीने लिखा है। ॥ ८६ ॥

इति षडशीति नामक चतुर्थ कर्मग्रन्थ समाप्त.

हासाई जुअल दुग वेअ आउ तेउत्तरी अधुवबंधी
भंगा अणाइ साइ अणंत संतुत्तरा चउरो ॥ ४ ॥

पढम बिआ धुवउदइसु धुववंधिसु तइअवज्ज भंगतिगं ॥
मिच्छम्मि तिन्निभंगा दुहावि अधुवातुरिअ भंगा ॥ ५ ॥

निमिणं थिरं अथिरं अगुरुअ सुहं असुह तेअ कम्मं चउवन्ना ॥
नाणंतरायं दंसण मिच्छ धुव उदय संगवीसा ॥ ६ ॥

थिरसुभइअर विणु अधुवबंधी मिच्छ विणु मोह धुवबंधी ॥
निद्दोव घाय मीसं सम्मं पण नवइ अधुवुदया ॥ ७ ॥

हास्यादि दो युगल तीन वेद और चार आयुष एवं ७३ अध्रुवबंधी प्र० है ॥ ध्रुवबंधी आदि चारोंका सादि अनादि चार भांगे कहना ॥ ४ ॥ ध्रुवोदयी प्र० में पहला और दूसरा भांगा ध्रुवबंधी प्र० में तीसरा भांगा वर्जके शेष १-२-४ भांगा होते हैं ॥ मिथ्यात्व मोहनीय विषे तीन भांगे और दोनो प्रकारकी अध्रुव प्र० में चौथा भांगा होता है ॥५॥ ध्रुवोदयी २७ निर्माण, स्थिर, अस्थिर अगुरुलघु, शुभ, अशुभ, तेजस, कार्मण, वर्ण गंध, रस, स्पर्श, पांच ज्ञानाव० पांच अन्तराय, चार दर्श० और मिथ्यात्व मोहनीयएवं २७ ध्रुवोदयी ॥ ६ ॥ अध्रुवोदयी ९५ स्थिर, शुभ, इतर अस्थिर, अशुभ एवं ४ विना शेष अध्रुवबन्धी ६९ प्र० मिथ्यात्व विना मोहनीयकर्मकी २८ प्र० ध्रुवबंधी, निद्रा, उपघात, मिश्रमोहनीय और सम्यक्त्व मोहनीय एवं ९५ प्र० अध्रुवोदयी ॥ ७ ॥

(१) अनादि अनन्त (२) अनादि सान्त (३) सादि अनन्त (४) सादि सान्त

आहारग सतगं वा सव्वगुणे वितिगुणे विणा तित्थं ॥
नोभयसंते मिच्छो अन्त मुहुतं भवे तित्थे ॥ १२ ॥

केवल जुवेला वरणा पण निद्दा बारसाईम कसाया ॥
मिच्छं ति सव्वघाइ चउनाण ति दंसणा वरणा ॥ १३ ॥

संजलणा नोकसाया विग्घं इय देसघाइयं अघाई ॥
पत्तेय तणुठ्ठाऊ तसवीसं गोअ दुग वन्ना ॥ १४ ॥

आहारक सप्तकको सत्ता सब गु० में विकल्पसे होती है ॥ दूसरे और तीसरे गु० विना बाकी सब गु० मे तीर्थंकर नामकी सत्ता विकल्पसे होती है ॥ आहारक सप्तक और जिन नामकी सत्ता होनेपर मिथ्यात्वी नही होता. ॥ तीर्थंकर नामकी सत्ता होते हुवे अन्तर मुहूर्त मिथ्यात्व गु० होता है. क्यों कि क्षयोपशमको वमके नरमें जाता हुवा अन्तर मुहूर्त मिथ्यात्वको स्पर्शे फिर तुरत सम्यक्त्व प्राप्त करे ॥१२॥ सर्व घाती २० केवलद्विक आवरण, पांचनिद्रा, प्रथमके बारह कषाय और मिथ्यात्वमोहनीय एवं २० प्र० सर्वघाती है ॥ देशघाती २५ चार ज्ञानाव० तीन दर्शनाव० संज्वल कषाय ४. नवनोकषाय और पांच अन्तराय एवं २५ प्र० देशघाती है ॥ अघाती ७५ आठ प्रत्येक प्र०, शरीर अष्टक की ३५ प्र०, चार आयुष्य. त्रसवीस, दो गोत्र, दो वेदनी. और वर्णचतुष्क एव ७५ प्र० अघाती है ॥ १३ ॥ १४ ॥

तणुअठ वेअ दुजुअल कसाय उज्जोअ गोअदुग निद्दा ॥
तसवी साउ परित्ता खित विवागाऽणुपुव्वीओ ॥ १९ ॥
घणघाइ दुगोअ जिणा तसि अरतिग सुभग दुभग चउ सासं ॥
जाइतिग जिअ विवागा आऊ चउरो भव विवागा ॥ २० ॥
नाम धुवोदय चउतणु वघाय सहाराणि अउ जोअतिगं ॥
पुग्गल विवागि बंधो पयइठिइ रस पएसति ॥ २१ ॥

परावर्तमान प्र० ९१ शरीर अष्टककी ३३ (तेजस कार्मण विना. तीन शरीर. तीन उपांग, छे संस्थान, छे संघयण, पांच जाति, चार गति, दो खगति, चार आनुपूर्वी) प्रकृति, वेद तीन, हास्यादि चार, सोलह कषाय, उद्योत, आतप, गोत्र दो. वेदनीदो, पांच निद्रा, त्रस दशक, स्थावर दशक, आयुष्य चार, एव ९१ प्र० परावर्तमान है ॥ यह प्रकृत्तियां अन्य प्रकृतियोंके बन्ध उदयको निवारके अपना बन्ध उदय स्थापन करती है. इसमे १६ कषाय, और पांच निद्रा एवं २१ केवल उदय परावर्तमान है. और स्थिर, अस्थिर, शुभ अशुभ, यह ४ प्र० केवल बन्ध परावर्तमान है. शेष ६६ प्र० तदुभय परावर्तमान है ॥ क्षेत्र विपाकी चार आनुपूर्वी क्षेत्र विपाकी है ॥ १९ ॥ जीव विपाकी ७८ घनघाती ४७ (५ ज्ञाना०. ९ दर्शना०, २८ मोहनीय ५ अंतराय,) गोत्रद्विक, वेदनीदो जिननाम, त्रसत्रिक, स्थावरत्रिक सुभग चतुष्क दुर्भग चतुष्क स्वासोस्वास, जातित्रिक (५ जाति. ४ गति, दो खगति) एवं ७८ जीवविपाकी है ॥ भव विपाकी ॥ चार आयुष्य भव विपाकी है ॥ २० ॥ पुद्गल विपाकी ३६ नाम कर्मकी ध्रुवोदयी १२ (निर्माण. स्थिर, अस्थिर, अगुरु० शुभ. अशुभ, तेजस कार्मण, वर्ण ४) शरीर चतुष्क (३ शरीर, ३ उपांग, छे संघ० छे संस्थान, उपघात, साधारण, प्रत्येक, उद्योतत्रिक (उ० आ० प०) एवं ३६ प्र० पुद्गल विपाकी है ।

मूल पयडीण अडसत छेग वंधेसु तिन्नि भूगारा ॥
अप्पतरा तिरि चउरो अवट्ठिआ नहु अवतव्वो ॥ २२ ॥
एगाद्हिगे भूओ एगाइ ऊणगंमि अप्पतरो ॥
तम्मतोऽवट्ठियओ पढमे समए अवतव्वो ॥ २३ ॥
नव छच्चउ दंसे दु दु ति दु मोहे दु इगवीस सत्तरह ॥
तेरस नव पण चउति दुइको नव अट्ठ दस दुन्नि ॥ २४ ॥

भूयस्कारवंध मूल प्रकृतिका आठ, सात, छे और एक प्रकृत्ति-बन्ध स्थान विषय तीन भूयस्कारबन्ध होते हैं. अल्पतरबन्ध तीन और अवस्थितबन्ध चार होते हैं. अवक्तव्यबन्ध नहीं है ॥ २२ ॥ एकादि प्रकृत्तिका अधिक बन्ध होनेसे भूयस्कार बन्ध कहलाता है। एकादि प्रकृतिका बन्ध हीन होनेपर अल्पतरबन्ध कहलाता है. समप्रकृत्तिके बन्धको अवस्थित बंध कहते हैं और अबंधक होके फिर पहले समयबन्ध हो उसको अव्यक्तबंध कहते हैं। ॥२३॥ उत्तर प्र० विषे भूय० बंध. दर्शनावरणीय कर्मकी उत्तर प्र० विषय नौ, छे, और चार प्र० का बन्धस्थान होता है इसमें दो भूयस्कार, दो अल्पतर, तीन अवस्थित और दो अव्यक्त बन्ध होते हैं ॥ मोहनीयकर्म विषय. बाईस, इक्कीस, सतरह, तेरह, नव, पांच, चार, तीन, दो, और एक एवं दश बन्धस्थान हैं, जिसमें नौ भूयस्कार, आठ अल्पतर क्यों कि सास्वादन गु० पहली अवस्थामें होता है इस लिये आठ कहा, दश अवस्थित और दो अव्यक्त बन्ध होते हैं. जैसे ग्यारहवे गु० में अबन्ध होके गिरता हुआ पहले समय सज्वल लोभ बांधे यह पहला अवस्थित और ग्यारहवें गु० में काल करके देवपने उत्पन्न हो वहां सतरह प्र० बांधे. यह दूसरा अव्यक्तव्य बन्ध होता है ॥ मिथ्यात्वकी २८ प्र० हैं जिसमें सम्य० मोहनी और मिश्रमोहका बन्ध नहीं है. और वेद दो तथा रती, शोक यह चार प्र० समकाले नहीं बन्धती इस लिये २२ का बंध कहा ॥ २४ ॥

तको होता है. तथा वज्रऋषभ० जिन नाम मिलाके और देवद्विक की जगह मनुष्यद्विक मिलानेसे ३० का बंध स्थान देवता मनुष्य प्रायोग्य बांधे ९ ॥

पूर्वोक्त ३० के बंध स्थानमें जिन नाम मिलानेसे ३१ का बन्ध स्थान देवप्रायोग्य ७-८ गु० वाला बांधे ७ ॥ और अपूर्व करणादि तीन गु० में रहा हुवा साधु एक यशः कीर्ति बांधे यह १ का बंध स्थान ८ ॥ छे भूयस्कार कहा सो १ का बंध स्थान श्रेणीसे गिरते होता है इस लिये भूय० नहीं होता अवक्तव्यबंध पहला श्रेणीसे गिरता एक यश कीर्ति बांध यह और दुसरा उप श्रेणीमें काल करके देवतामें पहले समे ३० प्र० बांधे यह एवं

उत्तर प्र० के बन्धस्थान और भूयस्कारादि यंत्र.

	ज्ञान.	दर्श	वेद	मोहनी	आयु.	नाम	गोत्र	अन्त.
उत्तर प्रकृत्ति	५	९	२	२६	४	६७	२	५
बंधस्थान	१	३	१	१०	१	८	१	१
बंधस्थानमें कितनी प्रकृतियां	५	९ ६ ४	१	२२-२१ १७-१३ ९-५-४ ३-२-१	१	२३ २५ २६-२८ २९-३० ३१-१	१	५
भूयस्कार	०		०	९	०	६	०	०
अल्पतर	०		०	८	०	७	०	०
अवस्थित	१		१	१०	१	८	१	१
अवक्तव्य	१		०	२	१	३	१	१

२ और कोइ जिन नाम रहित २९ बांधे यह तीजा अवक्तव्यबंध है ॥ २५ ॥

वीसयर कोडि कोडि नामे गोए सत्तरी मोहे ॥
तीसियर चउसु उदही निरय सुराउम्मि तित्तीसा ॥ २६ ॥

मुत्तु अकसाय ठिइ बार मुहुत्ता जहन्न वेअणिए ॥
अट्ठट्ठ नाम गोएसु सेसएसु मुहुत्तंतो ॥ २७ ॥

विग्घा वरणे असाए तीसं अट्ठार सुहुम विगलतिगे ॥
पढमागिइ संघयणे दस दुसुवरिमेसु दुगवुड्ढी ॥ २८ ॥

चालीस कसाएसू मिउ लहु निध्धुगहं सुरहि सिअ मुहुरे ॥
दस दोसड्ढ समहिआ ते हालिदं विला इणं ॥ २९ ॥
दस सुहगई उच्चे सुर दुगं थिरछक्क पुरिसे रइ हासे ॥
मिच्छे सत्तरी मणुदुग इत्थी साएसु पन्नरस ॥ ३० ॥
भय कुच्छ अरइ सोए विउव्वि तिरि उरल निरय दुग निए ॥
तेअपण अथिर छक्के तस चउ थावर इग पणिंदी ॥ ३१ ॥
नपु कुखगइ सासं चउगुरु कक्खड रुक्खसिय दुगंधे ॥
वीसं कोडाकोडी एवइ आवाह वास सया ॥ ३२ ॥

सोलह कषायकी उ० स्थिति चालीस कोडाकोडी साग० मृदु,
लघु, स्निग्ध, उष्ण, सुरभिगंध, श्वेत वर्ण, और मधुररस की दश
कोडाकोडी साग० और पीत वर्ण तथा अम्लरस का १२॥ कोडा-
कोडी सागरोपमकी उ० स्थिति है ॥ २९ ॥ शुभ विहायो गति,
ऊंच गोत्र, सुरद्विग, स्थिरषट्क, पुरुष वेद, रति और हास्य की
दश कोडाकोडी साग० मिथ्यात्व ७० कोडाकोडी साग० मनुष्य-
द्विक, स्त्री वेद, और सातावे० की उ० स्थिति १५ कोडाकोडी
सा० की है ॥ ३० ॥ भय, जुगुप्सा, अरति, शोक, वैक्रियद्विक,
तिर्यंचद्विक, औदा द्विक, नरकद्विक नीच गोत्र, तेजस पंचक,
(ते० का० अगु० निर्मा० उप०) अस्थिरषट्क (अस्थिर, अशुभ
दुर्भग, दुःस्वर, अना० अयश:) त्रस चतुष्क (त्रस, बादर, पर्या-
सा, प्रत्येक) स्थावर एकेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जाति ॥३१॥ नपुं-
सक वेद, अशुभ विहायो गति, श्वास चतुष्क (उच्छ्वास, उद्योत,
आतप, पराघात) गुरु कर्कश, रूक्ष, शीत दुर्गंध, की उ० स्थिति
बीस कोडाकोडी सागरोपम की है ॥ जितने कोडाकोडी सागरो-
पम की स्थिति है, उतने सो वर्षका अबाधा काल समझना ॥३२॥

गुरु कोडी कोडी अंतो तित्था हाराण भिन्न मुहुबाहा ॥
लहु ठिइ संखगुणूणा नरतिरि आणाउ पल्लतिगं ॥ ३३ ॥

इगविगल पुव्व कोडी पलिआऽसंखंस आउ चउ अमणा ॥
निरु वकमाण छमासा अबाह सेसाण भवतंसो ॥ ३४ ॥

लहु ठिइ बंधो संजलण लोह पणं विग्घ नाण दंसेसु ॥
भिन्न मुहुत्तं ते अट्ठ जसुच्चे बारस य साए ॥ ३५ ॥

दो इग मासो पक्खो संजलणे तिगे पुमट्ठ वरिसाणि ॥
सेसाणु कोसाओ मिच्छत्तठिइइ जं लद्धं ॥ ३६ ॥

अयमुक्कोसो गिंदिसु पलियाऽसंखंस हीण लहु बंधो ॥
कमसो पण वीसाए पन्नासय सहस संगुणिओ ॥ ३७ ॥

संज्वलत्रिकका अनुक्रमसे दो महीना, एक महिना, एक पक्ष का ज० स्थितिबन्ध है. और पुरुषवेदका ज० आठ वर्ष. यह जघन्य स्थितिबंध नौमे गु० में अपनी२ बंध प्र० के विच्छेद समये होता है. ॥ शेष ८५ प्र० की उत्कृष्ट स्थितिको मिथ्यात्वसे भाग देनेपर जो लब्ध संख्या आवे वह ज० स्थितिबंध समजना. (इन ८५ प्र० का जघन्यबंध एकेन्द्रियमें होता है. यथा–मिथ्यात्वका स्थितिबंध एक कोडाकोडी सागरोपमका है. असाता और निद्रा ५ का स्थितिबंध सागरोपमका सातीया तीन भाग अर्थात् ३/७ बारहकषाय ४/७ मनुष्यद्विक स्त्रीवेद ३/१४ इत्यादि उत्कृष्ट स्थिति परसे समज लेना एवं १०७ शेष १३ प्र० वैक्रिय अष्टक, जिन, आहारक २ मनुष्य तिर्यंचायु:का ज० स्थितिबंध अलग कहेंगे) ॥ ३६ ॥ पूर्वोक्त स्थितिबंध एकेन्द्रियमें उत्कृष्ट समझना ज० पल्योपमके अस० भागहीन कहना. (एवं ८५ प्र० का ज० उ० स्थितिबंध एकेन्द्रियमें कहा शेष ज्ञा० ५, दर्श० ४, अन्त० ५, की उ० स्थि० ३/७ सातावेदनी ३/१४ यशः, ऊंचगोत्र १/७ पुरुषवेद १/७ संज्वलकषाय ४/७ और दो आयुष्यकी पूर्व कोडकी स्थिति बांधे. यह उ० स्थिति ज० स्थिति पल्योपमके असं० भागहीन परन्तु दोनो आयुष्यकी ज० स्थिति क्षुल्लक भव प्रमाण समझना. एवं १०९ प्र० का बंध एकेन्द्रियमें है जिसका ज० उ० स्थितिबंध कहा)॥ ३७ ॥

विगलअसंनिसु जिट्ठो कणिट्ठओ पल्लसंखभागूणो ॥
सुरनिरयाउ समा दस सहस्स सेसाउ खुड्डभवं ॥ ३८ ॥
सव्वाण वि लहुबंधे भिन्न मुहू अबाह आउजिट्ठे वि ॥
केइ सुराउसमं जिणमंत मुहू बिंति आहारं ॥ ३९ ॥
सत्तरस समहिया किर इगाणुपाणुंमि हुंति खुड्डभवा ॥
सगतीससयतिहुत्तर पाणू पुण इग मुहुत्तं मि ॥ ४० ॥
पणसट्ठि सहस्स पणसय छत्तीसा इगमुहुत्त खुड्डभवा ॥
आवलियाणं दोसय छप्पन्ना एग खुड्डभवे ॥ ४१ ॥

अविरय सम्मोतित्थं आहार दुगामराउ य पमत्ते ॥
मिच्छ दिट्ठी बंधइ जिट्ठ ठिइ सेस पयडीणं ॥ ४२ ॥
विगल सुहुं माउगतिगं तिरि मणुआ सुरे विउव्वि निरय दुगं ॥
एगिंदि थावरा यवं आइसाणा सुरुक्कोसं ॥ ४३ ॥
तिरि उरलं दुगुज्जोअं-छिवट्ठ सुरनिरय सेसं चउगइआ ॥
आहार जिणमपुव्वो ऽनिअट्टि संजल पुरिसलहु ॥ ४४ ॥
सायजसुच्चा वरणाविग्घं सुहुमो विउव्वि छ असन्नी ॥
सन्नी विआउ बायर पज्जेगिंदिउ सेसाणं ॥ ४५

जिन नाम कर्मका उ० स्थितिबन्ध अविरति सम्य० और आहारकद्विक और देवायुका प्रमत संयत है शेष ११६ प्र० का उ० स्थितिबन्ध मिथ्यात्वी को होता है. (यह उत्कृष्ट स्थितिबन्ध अति संक्लिष्ट परिणामोंसे होता है. परन्तु देवायुः मनुष्यायुः तिर्यंचायुः अति विशुद्ध परिणामोंसे बन्धता है.) ॥ ४२ ॥ विकलेन्द्रिय ३, सूक्ष्म ३, आयुष्य ३, (देवायु' वर्जके) सुरद्विक, वैक्रिय २, और नरकद्विक एवं १५ प्र० का उ स्थितिबंध मिथ्यात्वी तिर्यंच और मनुष्यको होता है. इसानपर्यंत के देवता एकेन्द्रिय, स्थावर और आतप नामकर्मका उ० स्थितिबंध बांधते हैं ॥ ४३ ॥ तिर्यंच २ औदारिक २, उद्योत और छेवट्ठ संघयण को देवता और नारकी उ० स्थितिसे बांधते हैं ॥ शेष ९२ प्र० चारों गतिवाले मिथ्यात्वी उ० स्थितिसे बांधते हैं ॥ अपूर्व करण गु० में क्षपण श्रेणीवाला जीव आहारकद्विक और जिन नामको ज० स्थिति बांधे.। अनिवृति बादर संपरायवाला जीव संज्वल कषाय और पुरुषवेदका ज० स्थितिबंध करे ॥ ४४ ॥ सूक्ष्म संपराय गु० वर्ती जीव सातावेदनीय, यशःनाम, ऊंचगोत्र, नव आवरण और पांच अन्तरायको ज० स्थितिसे बांधे ॥ पर्याप्ता असंज्ञि पंचेन्द्रिय तिर्यंच वैक्रिय षट्का ज० स्थितिबंध करे. ॥ संज्ञि और असंज्ञि पंचेन्द्रिय चारों प्रकारके आयुष्यको ज० स्थितिसे बांधे. ॥ शेष ८५ प्रकृतिका ज० स्थितिबन्ध बादर पर्याप्ता एकेन्द्रिय जीव बांधते हैं ४५.

साणाइ अपूव्वंते अयरंतो कोडि कोडिओ नहिगो ॥
बंधोनहुं हीणो नय मिच्छे भव्विअरसन्निमि ॥ ४८ ॥
जइलहुबंधो बायर पज्ज असंखगुण सुहुमपज्जऽहिगो ॥
एसिअपज्जाणलहुं सुहुमेअर अपज्ज पज्जगुरु ॥ ४९ ॥
लहु बिअ पज्ज अपज्जे अपज्जे अर बिअ गुरुऽहिगो एवं ॥
ति चउ असन्निसु नवरं संख गुणो बिअ अमण पज्जे ॥ ५० ॥

सास्वादनसे यावत् अपूर्व करण गु० पर्यंत अन्त कोडाकोडी सागरोपमसे अधिक बंध नहीं होता. (उ० ७० आदि कोडाकोडी सागरका बंध केवल मिथ्यात्व गु० में होता है) और न अन्त. कोडाकोडी सा० से कम होता है तथा मिथ्यादृष्टि भव्य और अभव्यसंज्ञि पंचेन्द्रियमें भी इससे हीनबंध नहीं होता ॥ ४८ ॥ सबसेस्तोक यतिका जघन्य स्थितिबंध, १ बादर पर्याप्ता एकेन्द्रियका ज० स्थितिबंध असं० गुणा, २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्ताका ज० स्थि० विशेषाधिक, ३ बादर सूक्ष्म एकेन्द्रियके अपर्याप्ताका जघन्य स्थितिबंध विशेषाधिक, ५ सूक्ष्म अपर्याप्ता एकेन्द्रियका उ० स्थि० विशे० ६ बादर अपर्या० एके० उ० स्थि० विशे० ७ सूक्ष्म पर्या० एके० उ० स्थि० विशे० ८ बादर पर्या० एके० उ० स्थि० विशे० ९ बेरिन्द्रिय पर्या० ज० स्थि० बं० सं० गु० १०, बेरिन्द्रिय अपर्या० ज० बं० विशे० ११ बेरिन्द्रिय अपर्या० उ० बं० विशे० १२ बेरिन्द्रिय पर्याप्ता उ० बं० विशे० १३ तेरिन्द्रिय पर्या० ज० बं० विशे. १४ तेरि० अपर्या० ज० बं० विशे० १५ तेरि अपर्या. उ. बं० विशे. १६ तेरि० पर्या. उ. बं. विशे १७ चौरिन्द्रिय पर्या. ज. बं. विशे. १८ चौरि० अपर्या० ज० बं० विशे० १९ चौरि० अपर्या० उ० बं० विशे० २० चौरि० पर्या० उ० बं० विशे० २१ असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय पर्या० ज० बं० सं० गु० २२ असं० पंचे० अपर्या० ज० बं० विशे०

तो जइ जिट्ठो बंधो संख गुणो देस विरयहस्सियरो ॥
सम्मचउ सन्नि चउरो ठिइ बंधाऽणुकम संख गुणा ॥ ५१ ॥

सव्वाणवि जिट्ठ ठिइ असुभा जं साइ संकिलेसेणं ॥
इयरा विसोहिओ पुण मुतुं नर अमर तिरि आउ ॥ ५२ ॥

सुहुम निगोआइ खणप्प जोग बायरय विगल अमण मणा ॥
अपज्ज लहु पढम दुगुरु पज्जहस्सियरो असंख गुणो ॥ ५३ ॥

अपजत्त तसुक्कोसो पज्जजहन्नि अरु एव ठिइ ठाणा ॥
अपजेअर संख गुणा परम अपज विए असंख गुणा ॥ ५४ ॥

संज्ञि पंचेन्द्रिय अप० ज० योग असं० गु० ६ संज्ञि पंचें० पर्या० ज० योग असं० गु० ७ सूक्ष्मनिगोद अप० उ० योग असं० गु० ८ बादर निगोद अप० उ० योग असं० गु० ९ सूक्ष्मनिगोद पर्या० उ० योग असं० गु० १० बादर निगोद पर्या० ज० योग असं० गु० ११ सूक्ष्मनिगोद पर्या० उ० योग असं० गु० १२ बादरनिगोद पर्या० उ० योग असं० गु० १३ बेरि० अप० उ० योग असं० गु० १४ तेरि० अप० उ० योग असं० गु० १५ चौरि० अप० उ० योग असं० १६ असंज्ञि पचें० अप० उ० योग असं० गु० १७ संज्ञि पंचे० अपर्या उ० योग असं० गु० १८ बेरि० पर्या० ज० योग असं० गु० १९ तेरि० पर्या० ज० योग असं० गु० २० चौरि० पर्या० ज० योग असं० गु० २१ असंज्ञि पंचे० पर्या० ज० योग असं० गु० २२ संज्ञि पचें० पर्या० ज० योग असं० गु० २२ संज्ञि पंचें० पर्या० ज० योग असं० गु० २३ बेरि० पर्या उ० योग असं० गु० २४ तेरि० पर्या० उ० योग असं० गु० २५ चौरि० पर्या उ० योग असं० गु० २६ असंज्ञि पंचें० पर्या० उ० योग असं० गु० २७ संज्ञि पंचें० पर्या० उ० योग असं० गु० २८ (अनुत्तर देवका उ० योग असं० गु० २९ ग्रेवेक देव उ० योग असं० गु० ३० युगलीया उ० योग असं० गु० ३१ आहारक शरीर उ० योग असं० गु० ३२ शेष देव नारकी तिर्यंच मनुष्याणां यथोत्तरंमुत्कृष्ट योग असं० गु०) ३३ ॥ इसी तरह स्थिति स्थान भी कहना. परन्तु अपर्यासासे पर्यासा संख्यात गु० कहना. परन्तु इतना विशेष है कि अपर्यासा बेरिन्द्रियमें असंख्यात गुणा कहना ॥ ५४ ॥

विजयाइसु[32] गेविज्जे[163] तमाइ दहिसय दुतीस तेसट्ठं ॥
पण सीइ सयय बंधो पल्ल तिगं सुर विउव्वि दुगे ॥ ५८ ॥
समयादसंखकालं तिरिदुग निएसु अंउ अन्त मुहू ॥
उरलि असंख परट्टा साय ठिइ पुव्व कोडूणा ॥ ५९ ॥
जलहिसय पणसीअं परघुस्सासे पणिंदि तस चउगे ॥
बत्तिसं[30] सुहविहगइ पुम सुभगति गुच चउरंसे ॥ ६० ॥
असुखगइ जाइ आगिइ संघयणाहार निरयजोअ दुगं ॥
थिर सुभ जसथावर दस नपुं इत्थी दुजुअल मसायं ॥६१॥

अवन्ध कालसंख्या उपाय. विजयादि अर्थात् विजय २ बार और अच्युत ३ बार एवं १३२ सागर पूर्ण होता है. ॥ ग्रेवेयक १ विजयादि २ अच्युत ३ बार एवं १६३ तमः प्रभा १ ग्रेवेयक १ विजयादि २ और अच्युत ३ बार एवं १८५ सागरोपम मनुष्य भव युक्त होता है. एवं २५-७-९ प्र० का अनुक्रमसे अवन्धकाळ कहा ॥ अब ७३ अध्रुवबन्धी प्र० का निरंतर बंध कहते हैं ॥ सुरद्विक, वैक्रियद्विकका तीन पल्योपम तक उ० निरंतरबंध युगलीया) बांधे ॥ ५८ ॥ जघन्य एक समयसे यावत् उ० असं० काळ तक निरंतर बंध तिर्यंचद्विक और नीचगोत्रका (तेउ, वाउ, नारकोमें होता है ॥ आयुष्य ४ का निरतर बंध अन्तर मुहूर्त ॥ औदारिक शरीरका असंख्य पुद्गल परावर्त और साता-वेदनीका निरंतर देशोण पूर्वकोटो तक होता है ॥५९॥ पराघात, उश्वास, पंचेन्द्रिय जाति और त्रस चतुष्क विगय १८५ सागरो-पमका निरन्तर बन्ध होता है ॥ शुभ विहायोगति पुरुषवेद, सौभाग्यत्रिक, ऊंचगोत्र, और समचतुस्र संस्थान विगय १३२ सागरोपमका निरन्तर स्थितिबन्ध होता है ॥६०॥ अशुभ विहायो गति, अशुभ जाति, अशुभ संस्थान ५, अशुभ संघयण ५, आहारक-द्विक, नरकद्विक उद्योतद्विक, स्थिर, शुभ, यश, स्थावर दशक, नपुंसक वेद, स्त्री वेद, हास्ययुगल और साता वेदनीय, एवं ४१ ॥६

निंबुच्छुरसो सहजो दुति चउभाग कढि इक्क भागंतो ॥
इग ठाणाइ असुहो असुहाण सुहो सुहाणंतु ॥ ६५ ॥
तिव्वमिग थावरायव सुरमिच्छा विगल सुहुम निरयतिगं ॥
तिरि मणुआउ तिरि नरा तिरिदुग छेवठ्ठ सुरनिरया ॥६६॥
विउवि सुरा हारग दुगं सुखगइ वन्न चउ तेअ जिण सायं ॥
समचउ परघा तसदस पणिंदि सासु च्च खवगाउ ॥ ६७ ॥

नींब और शांठे के स्वाभाविक रसको दो, तीन, चार भाग को उकालके अर्थात् काढा बनाके एक भाग रक्खे यह अशुभ प्रकृतिका एक स्थानिक वगेरेह अशुभ रस है, और वैसे ही शुभ प्र० का शुभ रस समझना (एक स्थानिक रसके स्पर्द्धक असंख्याते होते हैं और वे स्पर्द्धक उत्तरोत्तर अनन्त गुण रसवाले होते हैं. एवं दो, तीन, चार स्थानिक रस स्पर्द्धक भी असंख्याते असंख्याते हैं. और परस्पर अनन्त गुण रस वृद्धीवाले है जितने अध्यवसाय स्थान है उतने ही अनुभाग स्थान हैं. क्योंकि अनुभाग अर्थात् रसका कारण कषायिक परिणाम है और कषायिक परिणाम अध्यवसायके तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, मंद, मंदतर, मंदतम आदि रूपसे असंख्याते भेद हैं. देखीये कम्मपयडीकी ३१वी गाथा श्री यशोविजयजीकृत टीका-कषायिक परिणामजन्य अनुभाग स्थान भी कषायिक परिणामके तुल्य अर्थात् असंख्याते ही हैं) ॥६५॥ एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप कर्मका उ० रसबन्ध मिथ्यात्वी तिर्यंच और मनुष्य करते है. ॥ तिर्यंचत्रिक, छेवट्ठ संघयण का उ० रस बंध देवता नारकी करते हैं ॥ ६६ ॥ वैक्रियद्विक, सुरद्विक आहारकद्विक शुभ विहायोगति, वर्ण चतुष्क तेजस चतुष्क जिननाम, सातावेदनी समचतुरस्र संस्थान, पराघात, त्रसदशक, पंचेन्द्रिय जाति, उश्वास और उच्चगोत्र एवं ३२ प्र० का उ० रस सूक्ष्म संपराय और पूर्व करण गु० वर्ति क्षपक श्रेणीवाला बांधे ॥ ६७ ॥

ारिं दुगनिअं तमतमा जिणमविरय निरय विणिग थावेरयं॥
ासुहमायव समो व साय थिर सुभ जसा सिअरा ॥ ७२ ॥

ास वन्न तेअ चउमणु खगइ दुग पणिदि सास परु घुच्चं ॥
ंघयणा गिइ न पुंथी सुभगि अरति मिच्छ चउ गइआ ॥७३॥

चउतेअ वन्न वेअणिअ नामणुक्कोस सेस धुवबंधी ॥
ाईणं अजहन्नो गोएं दुविहो इमो चउहा ॥ ७४ ॥

तिर्यचत्रिक और नीचगोत्रके ज० रसको तम तमःप्रभाना-
:की बांधे. जिन नामका ज० रस अविरति सम्यक्त्वदृष्टि मनुष्य
ांधे. । नरक विना शेष तीन गतिके जीव. एकेन्द्रिय जाति और
थावर नामकर्मका ज० रस बांधे । सौधर्म ईशान पर्यंत देवता.
ातप नामकर्मका ज० रस बांधे.। सम्यक्त्वदृष्टि अथवा मिथ्या-
ृष्टि जीव, साता, स्थावर, शुभ और यश. इनकी प्रतिपक्षि ४
वं ८ प्र० का ज० रस बांधे. ॥ ७२ ॥ त्रस ८, वर्ण ४, तेजस ४
तै० का० अगु० नि०) मनुष्यत्रिक. खगतिद्विक पंचेन्द्रिय,
उच्छ्वास, पराघात, ऊंचगोत्र, संघयण ६, संस्थान ६ नपुंसकवेद,
स्त्रीवेद. सौभाग्यत्रिक और दुःर्भाग्यत्रिक एवं ४० प्र० का ज० रस
चारोंगतिवाले मिथ्यादृष्टि जीव बांधते हैं ॥ ७३ ॥ तेजस ४,
शुभवर्ण ४, वेदनीय और नामकर्मका अनुत्कृष्ट रसबंध. शेष ४३
ध्रुवबन्धी प्रकृति तथा १४ घाति प्र० का अजघन्य रस और गोत्र
कर्मका अनुत्कृष्ट और अजघन्य दोनों रसबंध. चार प्रकारसे हैं
सादि अनादि, ध्रुव, अध्रुव) ॥ ७४ ॥

अंतिम चउफास दुगंध पंच वन्नरस कम्म खंधदलं ॥
सव्वजि अणंत गुणरस अणुजुत मणंतय पएसं ॥ ७८ ॥
एग पएसो गाढं निअसव्व पएसओ गहेइ जिओ ॥
थोवो आउ तदंसो नामे गोए समो अहियो ॥ ७९ ॥

अन्तके चार स्पर्श, दो गंध, पांच वर्ण, पांच रसवाले कर्म स्कंध जो सर्व जीवांसेभी अनन्त गुणे रसवाले अणुवोंसे युक्त है अनन्त प्रदेशी एक प्रदेश क्षेत्र को अवगाह कर रहने वाले कर्मस्कंध को अपने सर्व प्रदेशों से जीव ग्रहण करता है. वह (ग्रहण किया हुआ अनन्त स्कंधमय कर्मदल) का सबसे स्तोक भाग आयुष्य कर्मपने परिणमता है. नाम और गोत्र कर्म के विषय तुल्य परन्तु आयुष्य कर्म से अधिक भाग परिणमता है. विवेचन—जीव कैसा कर्म दलिक ग्रहण करते हैं वह कहते हैं. आठ स्पर्शमें से अन्त के ४ स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष होते हैं. एक परमाणुमें पूर्वोक्त ४ स्पर्श में दो स्पर्श प्रतिपक्षी होते हैं ज्यादा परमाणु इकठे होने से चारों स्पर्श मिलते हैं और वर्ण ५, गंध २, रस ५, युक्त होते हैं. परमाणु में वर्ण गंध रस एकेक ही होता है) ऐसे कर्मस्कंध के दलीये जो प्रत्येक परमाणु प्रति सब जीव से अनन्त गुणें रस के अविभाग परिछेद है ऐसे परमाणुवों से युक्त और अनन्त प्रदेशी अर्थात् अभव्य से अनन्त गुणे परमाणु संयुक्त एक प्रदेशावगाढ जिस आकाश प्रदेश की अवगाहनामे जीव रहा हो उसी आकाश प्रदेश को अवगाहा हुवा परन्तु अन्तर परंपर प्रदेशावगाढ नहीं ऐसे कर्मस्कंध दलिक को जीव अपने सर्व प्रदेशों से ग्रहण करता है. एक अध्यवसाय से ग्रहण किये कर्मदल जो अष्टविधि बंधक हो तो आठ भाग सात विधि बंधक हो तो सात भाग और छे विधि बंधक हो तो छे भाग होते हैं ॥७८-७९॥

पलिअं।ऽसंखमुहू सासण इअरे गुणअंतरं हस्सं ॥
गुरु मिच्छिवे छसठी इअर गुणे पुग्गलद्धंतो ॥ ८४ ॥
उद्धार अद्ध खित्तं पलिअ तिहा समय वाससय समए ॥
केसवहारो दीवोदहि आउ तसाइ परिमाणे ॥ ८५ ॥
दव्वेखितेकाले भावे चउह दुह वायरो सुहुमो ॥
होइ अणंतुस्सप्पिणीपरिमाणो पुग्गल परट्टो ॥ ८६ ॥
उरलाइ सत्तगेणं एगजिओ मुअइ फुसिअ सव्वअणु ॥
जत्तिअ कालिस थूलो दव्वे सुहुमो सगन्नयरा ॥ ८७ ॥

गु० विषय ज० उ० अन्तर सास्वादन और अन्य दूसरे गुणस्थानका जघन्य अन्तर पल्योपमके असं० भाग है. और अन्य गु० का ज० अन्तर अन्तरमुहुर्तका है. । मिथ्यात्व गुणस्थानकका उ० अन्तर दोछासठ (१३२) सागरोपम का है. और दूसरे १० गुणस्थानोंका उ० अन्तर अर्ध पुद्गल परावर्त है ॥८४॥ पल्योपम उद्धार, अद्धा और क्षेत्र एवं ३ प्रकारके पल्योपम हैं ये अनुक्रमसे वालाग्र प्रति समय वालाग्र सो वर्षमें और वालाग्र को स्पर्शे. अस्पर्शे हुए आकाश प्रदेशों को प्रति समय अपहरण करणेके दृष्टान्तसे होता है. इससे द्वीपसमुद्र. आयुष्य और त्रसादि जीवोंकी गणती अनुक्रम से होती हैं ॥ विशेषतासे इनके सूक्ष्म बादर कहके छे भेद भी किये हैं ॥८५॥ पुद्गल परावर्त द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव विषयिक चार प्रकारसे पुद्गल परावर्त. इनको सूक्ष्म और बादर दो प्रकारसे माने हैं ये प्रत्येक अनन्त उत्सर्पिणि अवसर्पिणि कालचक्र प्रमाण है ॥८६॥ औदारिकादि सात वर्गणा (आहारक विना के चौदह राज लोकमे रहे हुवे सर्व परमाणुओंको औदारिकादि सातापणे एक जीव स्पर्श कर त्याग करे उस कालको स्थूल द्रव्य पुद्गल परावर्त कहते हैं. और सातो वर्गणामें की एकेक कोई एक वर्गणा सर्व परमाणुओंको अनुक्रमसे एकेक वर्गणापणे परिणमाके त्याग उस कालको सूक्ष्म द्रव्य पुद्गल परावर्त कहते हैं ॥ ८७ ॥

निद्दापयला दुजुअल भयकुच्छा तित्थ सम्मगो सुजई ॥
आहार दुगं सेसा उक्कोस पएसगा मिच्छो ॥ ९२ ॥
सुमुणि दुन्नि असन्नि निरयतिग सुराउ सुर विउव्विदुगं ॥
सम्मो जिणं जसन्नं सुहुमनिगो आइ खणीसेसा ॥ ९३ ॥

दंसण छग भयकुच्छा बि ति तुरिअ कसाय विग्घ नाणाणं ॥
मूलछगेऽणुक्कोसो चउह दुहासेसि सव्वत्थ ॥ ९४ ॥

निद्रा, प्रचला, हास्य, युगल, भय, जुगुप्सा, का उ० प्र० बन्ध सम्यक्त्व दृष्टि ॥ आहारक द्विकका सुयति अर्थात् अप्रमत्त साधु. और शेष ६६ प्र० का उ० प्रदेशबन्ध मिथ्यादृष्टि जीव करते हैं ॥ ९२ ॥ (जघन्य प्रदेशबन्ध स्वामी कहते हैं) अप्रमत्त यति आहारक द्विकको, असंज्ञि पर्याप्ता नरकत्रिक और देवायुष्यको, सम्यक्त्वदृष्टि (नारकी देवता से चयके मनुष्यभव प्रथम समय) देवद्विक, वैक्रियद्विक और जिननाम कर्मको ज० प्रदेशबन्धसे बांधे और शेष १०९ प्र० को अपर्याप्ता सूक्ष्म निगोदके जीव उत्पत्ति प्रथम समय ज० प्रदेशबन्धसे बांधते हैं ॥ ९३ ॥ दर्शनषट्क (४ द० दो निद्रा) भय, जुगुप्सा, दूसरा, तीसरा, चौथा कषाय, पांच अन्तराय पांच ज्ञानाव० का और मोहनीय, आयुष्य कर्म वर्जके शेष छे मूल प्रकृतियोंके विषय अनुत्कृष्ट प्रदेशबन्ध चार प्रकार (सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव) से होता है. शेष तीन प्रकारके प्रदेशबन्ध विषय और बाकी रही हुई सर्व प्रकृतियोंके प्रदेशबन्ध विषय सर्वत्र दो भांगों (सादि अध्रुव) से बन्ध होता है. जिसके १०९६ भांगे होते हैं. सो ग्रंथान्तरसे समझ लेना. ॥९४॥

अणदंसं नपुंसित्थी वेअच्छक्क च पुरिस वेअंच ॥
दो दो एगंतरिए सरिसे सरिसं उवसमेइ ॥ ९८ ॥
अणमिच्छ मीसं सम्मं तिआउ इग विगल थीणं तिगुजोअं ॥
तिरि निरय थावर दुगं साहारायवअड नपुं सिन्थी ॥ ९९ ॥
छग पुम संजलणा दोनिद्दा विग्धा वरण खए नाणी ॥
देविन्दसूरिलिहिअं सयगामिणं आयसरणठा ॥ १०० ॥ इति.

(उपशम श्रेणी करनेवाला) अनन्तानुबंधी कषाय ४, दर्शनमोहनीय ३, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, हास्यादि षट्क, पुरुषवेद और एकेक संज्वल कषायके अन्तर दो दो दूसरे कषाय बराबरीके अनुक्रमसे उपशमावे ॥ ९८ ॥ स्थापना (क्षपक श्रेणीक करनेवाला) अनन्तानुबंधी कषाय ४, दर्शन मोहनीय ३, आयुष्य ३, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, थिणद्धित्रिक, उद्योतनाम, तिर्यंच द्विक नरक द्विक, स्थावर द्विक, साधारणनाम, आतपनाम, दूसरा तीसरा कषाय ८, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, ॥९९॥ हास्यादिषट्क, पुरुषवेद, संज्वल कषाय, दो निद्रा, पांच अन्तराय, नौ दर्शनावरणीय क्षय होनेसे केवली होते हैं॥ यह शतकनामा कर्मग्रन्थ अपनी आत्माको संभालनेके लिये देवेन्द्रसूरिजीने लिखा ॥ १०० ॥ इति

क्षपकश्रेणीयंत्रम्.

	ततः सिद्ध यति क्षययति १४८ १२ प्रकृति ७३ प्रकृति	१४ वे० गुणस्था० १३ वे० ,,
ज्ञानाव० ५ दर्शना० ४ अन्तराय५ एवं १४		
	निद्रा द्विक २ संज्वल लोभ १ संज्वल माया १ संज्वल मान १ संज्वल क्रोध १ पुरुष वेद १ हास्यादि षट् ६ स्त्रीवेद १ नपुंसक वेद १ एकेन्द्रियादि १६ प्र०	१२ वे० गुणस्था० १० वे० गुणस्था०
अप्रत्या० क्रोध मान माया लोभ० प्रत्या० क्रोध मान माया लोभ ८		
	देव नारकी तीर्यंचायुः ३ सम्यक्त्व मोहनीय १ मिश्र मोहनीय १ मिथ्यात्व मोहनीय १	४-५-६ ७ वे गुण स्थानकर्म
अनन्तानंबन्धी क्रोध मान माया लोभ ४		

॥ इति शतक नामा पंचम कर्मग्रन्थ समाप्तम् ॥

॥ ॐनमः सिद्धं ॥

श्री चन्द्रमहत्तराचार्य कृत.

सप्ततिका नामा षष्ट कर्मग्रन्थ.

—※(◎)※—

मंगल और अभिधेय.

सिद्धपएहिं महत्थं, बंधोदय संत पयडि ठाणाणं ॥
वुच्छं सुण संखेवं, नीसंदं दिठि वायस्स ॥ १ ॥

कइ बंधतो वेअइ, कइ कइ वासंत पयडि ठाणाणि ॥
मूलुत्तर पगइसु. भंग विगप्पा मुणो अन्वा ॥ २ ॥

मूल प्रकृतिके बंधोदय सत्ता संबंध

अट्ठविह सत्त छब्बंधएसु, अट्ठेव उदय संतंसा ॥
एगविहे तिविगप्पो, एगविगप्पो अबंधंमि ॥ ३ ॥

जीवस्थान विषय मूल प्रकृति भंग.

सत्तट्ठ बंध अट्ठुदय. सततेरससु जीवठाणेसु ॥
एगमि पंच भंगा. दो भंगा हुंति केवलिणो ॥ ४ ॥

गुणस्थान विषय भंग.

अट्ठसुएक विगप्पो, छस्सुवि गुण सन्निएसु दुविगप्पो ॥
पतेअं पतेअं बंधोदय संत कम्माणं ॥ ५ ॥

मोहनीयके नव उदयस्थान.

एगं व दो व चउरो, एतो एगाहिआ दसुक्कोसा ॥
ओहेण मोहणिज्जे, उदय ठाणाणि नव हुंति ॥ १३ ॥

मोहनीयके पन्द्रह सत्तास्थान.

अठय सत्तय छच्चउ, तिगदुग एगाहिआ भवेवीसा ॥
तेरस बारिकारस, इत्तो पंचाइ एगूणा ॥ १४ ॥
संतस्स पयडि ठाणाणि, ताणि मोहस्स हुंति पन्नरस ॥
बंधोदय संते पुण, भंग विगप्पे बहुजाण ॥ १५ ॥

मोहनीयके बंधस्थान भंग.

छब्बावीसे चउइग, वीसे सत्तरस तेरसे दो दो ॥
नव बंधगे वि दुण्णिओ, इक्किक्कं मओपरं भंगा ॥ १६ ॥

कौन २ से बंधस्थानमें कितने २ उदयस्थान हैं.

दस बावीसे नव इगवीसे, सत्ताइ उदय कम्मंसा ॥
छाइ नव सत्तरसे, तेरे पंचाइ अठेव ॥ १७ ॥

नव प्रकृतिके बंध भग.

चत्तारि आइ नव बंध गेसु उक्कोस सत्तमुदयंसा ॥
पंचविह बंधगे पुण, उदओ दुण्हं मुणे अव्वो ॥ १८ ॥

बंधस्थान उदयस्थान.

इत्तो चउबंधाइ इकि कुदया हवंति सव्वेवि ॥
बंधो वरमे वितहा, उदया भावे विवा हुज्जा ॥ १९ ॥

बंधस्थानकविषयभंग संख्या.

चउपण वीसासोलस, नव बाणु उईसया यअडयाला ॥
एयालुत्तर छायाल सया इकिकि बंधविहि ॥ २७ ॥

नामकर्मके बारह उदयस्थान.

वीसिगविसा चउवीसगाउ एगाहिआ य इगतीसा ॥
उदय ठाणाणी भवे, नव अठ्य हुंति नापस्स ॥ २८ ॥

उदयस्थाने सर्व भंग संख्या

इक विआलिकारस, तित्तीसा छस्सयाणि तित्तीसा ॥
बारस सत्तरस सयाणहिगाणि बिपंचसीईहि ॥ २९ ॥
अउणत्ती सिक्कारस, सयाणि हिअ सत्तर पंच सहीहि ॥
इक्किकगंचवीस, दहुदयंतेसु उदय विहि ॥ ३० ॥

नाम कर्मके सत्तास्थान.

तिदुनउई गुण नउई, अडसी छलसी असीइ गुणसीई ॥
अठ्य छप्पन्नत्तरि, नवअठ्य नाम संताणि ॥ ३१ ॥

नामकर्मका बंधोदय सत्तास्थान.

अठ्य बारस बारस, बंधोदय संत पयडि ठाणाणी ॥
ओहेणाऽएसेणय, जत्थ जहा संभवं विभंजे ॥ ३२ ॥

सामान्यपने बंधोदय सत्ता संवेध.

नवपणगोदय संता, तेवीसे पणवीस छव्वीसे ॥
अठ चउरठ्ठ वीसे, नवसत्ति गुणतीसतीसम्मि ॥ ३३ ॥

बंधस्थानकविषयभंग संख्या.

चउपण वीसासोलस, नव बाण उईसया यअडयाला ॥
एयालुत्तर छायाल सया इक्किक्कि बंधविहि ॥ २७ ॥

नामकर्मके बारह उदयस्थान.

वीसिगविसा चउवीसगाउ एगाहिआ य इगतीसा ॥
उदय ठाणाणी भवे, नव अठ्ठय हुंति नामस्स ॥ २८ ॥

उदयस्थाने सर्व भंग संख्या

इक बिआलिक्कारस, तित्तीसा छस्सयाणि तित्तीसा ॥
बारस सत्तरस सयाणहिगाणि बिपंचसीईहिं ॥ २९ ॥
अउणत्ती सिकारस, सयाणि हिअ सत्तर पंच सठ्ठीहिं ॥
इक्किकगंचवीस, दठ्ठुदयंतेसु उदय बिहि ॥ ३० ॥

नाम कर्मके सत्तास्थान.

तिदुनउई गुण नउई, अडसी छलसी असीइ गुणसीई ॥
अठ्ठय छप्पन्नत्तरि, नवअठ्ठय नाम संताणि ॥ ३१ ॥

नामकर्मका बंधोदय सत्तास्थान.

अठ्ठय बारस बारस, बंधोदय संत पयडि ठाणाणी ॥
ओहेणाऽएसेणय, जत्थ जहा संभवं बिभंजे ॥ ३२ ॥

सामान्यपने बंधोदय सत्ता संवेध.

नवपणगोदय संता, तेवीसे पणवीस छव्वीसे ॥
अठ चउरठ्ठ वीसे, नवसत्ति गुणतीसतीसम्मि ॥ ३३ ॥

जीवस्थाने नामकर्मके बंधुदयसत्तास्थान.

पण दुगपणगंपणचउ, पणगं पणगाहवंति तिन्नेव ॥
पणछप्पणगं छच्छप्पणगं अट्ठट्ठ दसगं ति ॥ ४१ ॥

सत्तेव अपज्जत्ता, सामी सुहुमा य बायरा चेव ॥
विगलिंदि आउतिन्निउ, तहय असन्नी असन्नी अ ॥ ४२ ॥

गुणस्थाने ज्ञानाव० दर्शनाव० अन्तरायभंग.

नाणंतरायतिविहम, विदससुदोहुंतिदोसुठाणेसु ॥
मिच्छासाणेबीए, नवचउपणनवयसंतंसा ॥ ४३ ॥

मिस्साइ नियट्टिओ, छच्चउपणनवयसंतकम्मंसा ॥
चउबंधतिगेचउपण नवसुदुसुजुअलछस्संता ॥ ४४ ॥

उवसंते चउपणनव, खीणे चउरुदयछच्च चउसत्ता ॥
वेअणि आउ अ गोए, विभज्जमोहंपरंवुच्छं ॥ ४५ ॥

गुणस्थानेवेदनीय गोत्रकर्मभंग.

चउछस्सु दुन्निसत्तसु, एगे चउगुणिसुवेअणि अभंगा ॥
गोएपण चउदोत्तिसु, एगहसुदुन्नि इक्कंमि ॥ ४६ ॥

गुणस्थाने आयुष्यकर्म भंग.

अट्ठच्छाहिगवीसा, सोलसवीसं च बारस छदोसु ॥
दो चउसुतीसुइक्कं, मिच्छाइसु आउए भंगा ॥ ४७ ॥

गुणस्थाने योगादिभंग.

जोगो व ओगलेसइएहिं गुणिआ हवंति कायव्वा ॥
जेजत्थगुणठाणे, हवंति ते तत्थ गुणकारा ॥ ५५ ॥

गुणस्थाने उदयपद

अट्ठट्ठीबत्तीसं, बत्तीसं सट्ठिमेव बावन्ना ॥
चोआल दोसु वीसा, विअमिच्छ माइसु सामन्नं ॥ ५६ ॥

गुणस्थाने मोहनीयकर्म सत्तास्थान.

तिन्नेगे एगेग, तिगमीसे पंच चउसु तिग पुव्वे ॥
इक्कार बयरं मिउ, सुहमे चउ तिन्नि उवसंते ॥ ५७ ॥

गुणस्थाने नामकर्म बंधुदयसत्तास्थान.

छन्नव छक्कं तिगसत्त. दुगदुग तिग दुग तिअट्ठ चउ ॥
दुगछच्चउ दुगपण चउ चउदुगचउपणगएगचउ ॥ ५८ ॥
एगेगमट्ठ एगेगमट्ठ, छउमत्थ केवलि जिणाणं ॥
एग चउ एग चउ. अट्ठ चउदुछक्कमुदयं सा ॥ ५९ ॥

मिथ्यात्वे बंधभंग.

चउपणवीसासोलस. नव चत्तालासया य बाणउइ ॥
बत्तीसुत्तरं छायालसया, मिच्छस्स बंधविहि ॥ ६० ॥

सास्वादने बंधभंग.

अट्ठसया चाउसट्ठी. बत्तीससयाइ सासणे भेआ ॥
अट्ठावीसाइसु. सव्वाणऽट्ठहिगछन्नउई ॥ ६१ ॥

गुणस्थाने बंधप्रकृति.

तित्थयराहारग विरहिआउ, अज्जइसव्व पयडीओ ॥
मिच्छत्तवेअगो सासाणोवि गुणवीससेसाओ ॥ ६९ ॥
छायाल सेसमीसं अविरय समो तिआल परिसेसा ॥
तेवन्न देस विरओ, विरओ सगवन्नसेसाओ ॥ ७० ॥
इगुणट्ठिमप्पमत्तो, बंधइ देवाउ अरस इअरो वि ॥
अट्ठावन्नमपुव्वो, छप्पन्नंवावि छव्वीसं ॥ ७१ ॥
बावीसाएगुणं, बंधइ अट्ठारसंतमनिअट्टी ॥
सतरसुहुमसरागो, सायममोहो सजोगुत्ति ॥ ७२ ॥
एसोउबंध सामित्त ओहो गइ आइएसु वि तहेव ॥
ओहाओ साहिज्जइ, जत्थ जहा पगइ सब्भावो ॥ ७३ ॥
तित्थयरदेव निरयाउअंच, तिसुतिसुगइसु बोधव्वं ॥
अवसेसा पयडीओ, हवंति सव्वासु वि गइसु ॥ ७४ ॥

उपशमश्रेणि स्वरूप

पढमकसाय चउक्कं, दंसण तिग सत्तगा वि उवसंता ॥
अविरयसम्मत्ताओ, जावनिअट्टित्ति नायव्वा ॥ ७५ ॥
सत्तट्ठ नवय पनरस, सोलस अट्ठारसेवगुणवीसा ॥
एगाहि दु चउवीसा, पणवीसा बायरे जाण ॥ ७६ ॥
सत्तावीसं सुहुमे, अट्ठावीसंच मोह पयडीओ ॥
उवसंतवीअराए, उवसंता हुंतिनायव्वा ॥ ७७ ॥

मणुअगइ सहगयाओ, भवखित्तविवाग जिअविवाओ ॥
वेअणि अन्नयरुच्चं, चरम समयंमि खीअंति ॥ ८७ ॥

अहसुइअ सयल जगसिहरमरुअ निरुवमसहाव सिद्धिसुहं ॥
अनिहण मव्वावाहं, तिरयण सारं अणुहवंति ॥ ८८ ॥

उपसंहार.

दुरहिगम निउण परमत्थ रुइर वहुभंगदिट्ठिवायाओ ॥
अत्था अणुसरिअव्वा, वंधोदय संतकम्माणं ॥ ८९ ॥

जोजत्थ अपडिपुन्नो, अत्थो अप्पागमेण वंधोति ॥
तं खमिऊण वहुसुआ, पूरेऊण परिकहंतु ॥ ९० ॥

गाहग्गं सयरीए, चंदमहत्तरमयाणु सारीए ॥
टीगाइ निअमिआणं, एगूणा होइ न उइओ ॥ ९१ ॥ इति

इति सप्ततिकाख्यः षष्ठःकर्मग्रन्थ
संपूर्णः

मणुअगइ सहगयाओ, भवखित्तविवाग जिअविवाओ ॥
वेअणि अन्नयरुच्चं, चरम समयंमि खीअंति ॥ ८७ ॥

अहसुइअ सयल जगसिहरमरुअ निरुवमसहाव सिद्धिसुहं ॥
अनिहण मव्वावाहं, तिरयण सारं अणुहवंति ॥ ८८ ॥

उपसंहार.

दुरहिगम निउण परमत्थ रुइर बहुभंगदिट्ठिवायाओ ॥
अत्था अणुसरिअव्वा, बंधोदय संतकम्माणं ॥ ८९ ॥

जोजत्थ अपडिपुन्नो, अत्थो अप्पागमेण बंधोति ॥
तं खमिऊण बहुसुआ, पूरेऊण परिकहंतु ॥ ९० ॥

गाहग्गं सयरीए, चंदमहत्तरमयाणु सारीए ॥
टीगाइ निअमिआणं, एगूणा होइ न उइओ ॥९१॥ इति

इति सप्ततिकाख्यः षष्टःकर्मग्रन्थ
संपूर्णः